डो० जी० कसूलस

व्यापक उत्पादन

व्यापक खपत

आर्थिक प्रगति की कुंजी

व्यापक क्रय-शक्ति

अनुवादक

वासुदेव झा

प्रकाशक

रामलाल पुरी, संचालक

आत्माराम एण्ड सन्स

काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य	:	एक रुपया
प्रथम संस्करण	:	१ ९ ५ ९
आवरण	:	योगेन्द्रकुमार लल्ला
मुद्रक	:	नवीन प्रेस, दिल्ली-६

लेखक-परिचय

दिमित्रियोस जी० कसूलस फुलब्राइट छात्रवृत्ति लेकर सिराक्युस यूनिवर्सिटी में अध्ययन करने के लिए १९५१ में अमेरिका आये थे। इससे पूर्व वह यूनान की एथेन्स यूनिवर्सिटी से लॉ की डिग्री ले चुके थे।

कसूलस खलकिस, यूनान के एबोग्रा द्वीप में पैदा हुए और अपने जीवन के कई वर्ष उन्होने यूनान के एक दूसरे द्वीप क्रीट में बिताए। १९४३ में जर्मन सैन्य-अधिकारियों से कुछ झगड़ा हो जाने के कारण वह यूनान की मुख्य भूमि पर चले गए। १९४४ के दिसम्बर में कम्युनिस्ट क्रान्ति के दरम्यान उन्हे कम्युनिस्ट गुरिल्लों ने गिरफ्तार कर लिया। जिस दिन उन्हे गोली मारी जानेवाली थी, उसके एक दिन पूर्व ही ब्रिटिश कमाण्डर जनरल स्कोकी और 'इलास' गुरिल्लो में समझौता हो गया और वह बाल-बाल बच गए। बाद में, १९४७-४९ के कम्युनिस्ट विद्रोह के समय, वह मेसिगेनिया में यूनानी सेना के साथ काम कर रहे थे।

सिराक्युस यूनिवर्सिटी से १९५३ में उन्होने राजनीतिक विज्ञान में एम. ए. किया। उनके सशोध-निबन्ध को उसी साल सिराक्युस यूनिवर्सिटी प्रेस ने 'दि प्राइस ऑफ फ्रीडम, ग्रीस इन वर्ल्ड अफेयर्स १९३९-५३' नाम से प्रकाशित किया। इस पुस्तक का यूनानी अनुवाद १९५५ में प्रकाशित हुआ। अप्रैल, १९५५ से वह विश्व की घटनाओ का साप्ताहिक विश्लेषण प्रस्तुत करते रहे है, जो यूनान के छ दैनिक पत्रों में नियमित रूप से प्रकाशित होते हैं।

१९५६ में सिराक्युस यूनिवर्सिटी ने श्री कसूलस को 'डॉक्टर ऑफ फिलासफी इन इण्टरनेशनल रिलेशंस' की उपाधि से विभूषित किया।

डॉ० कसूलस को अल्पविकसित देशों तथा अमेरिकी और सोवियत रूस की आर्थिक संस्थाओ और रिवाजो की अच्छी जानकारी है, उनकी यही जानकारी इस असाधारण और रोचक पुस्तक की अद्वितीय पृष्ठ-भूमि रही है।

प्रस्तावना

जन-जीवन के स्तर को ऊँचा उठाने के उद्देश्य को लेकर संसार में आज स्पष्टत. दो महान दर्शन एक दूसरे को पीछे छोडने की होड़ में लगे हुए हैं। एक दर्शन तो है अधिनायकवादी शासन-तंत्र का, जिसके अन्तर्गत अर्थ-व्यवस्था की सम्पूर्ण सत्ता कुछ ही लोगो के हाथों में केन्द्रित होती है। व्यक्ति के पृथक् अस्तित्व का उतना महत्त्व नही होता और वह राज्य-सत्ता के इगित पर चलनेवाला एक पुर्जा मात्र रह जाता है।

इसके विपरीत दूसरा दर्शन है लोकतत्र का। इसके अन्तर्गत 'व्यक्ति के चरम विकास' को सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त है। इसमें वर्ग विशेष का अस्तित्व समाप्त करने का प्रश्न नही उठना, बल्कि मुख्य ध्येय यह होता है कि सभी वर्गों के सहयोग से एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण हो जिसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को समाज और राज द्वारा सुलभ सुविधाओं और अवसरों का लाभ समान रूप से मिल सके।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत ने इस दूसरे मार्ग पर ही चलने का निश्चय किया। हमारी पचवर्षीय योजनाओ का प्रेरणा-स्रोत हमारा यही सकल्प है। कहना नही होगा कि, अभाव और कष्ट की इस अवस्था से लाखो-करोड़ो इन्सानो को मुक्ति दिलाना कोई आसान काम नही है। कठिनाई तब और भी बढ जाती है जब हम इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए बाध्यता के मार्ग का अनुसरण न कर सबकी इच्छाओ को प्रश्रय देने के रास्ते पर चलना तय करते हैं—सर्वोदय का सकल्प सामने रखते हैं। यह बात नही कि, गरीबी और अभाव से लडाई केवल भारत में ही हो रही है, सम्पूर्ण ससार मे यह आर्थिक सग्राम चल रहा है। हाँ, इसके रूप भिन्न-भिन्न हैं, रास्ते अलग-अलग है।

लोकतत्री ढाँचे के अन्तर्गत रहते हुए भी जन-सामान्य का जीवन-स्तर उठाने की इस समस्या को सुलझाते हुए हम अमेरिकियों के अनुभवों

पर गौर कर सकते हैं। लोकतंत्री उद्योगवाद के मार्ग पर चलकर अमेरिका ने आर्थिक क्षेत्र में जो आश्चर्यजनक प्रगति की है वह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि अभाव, गरीबी, बीमारी, बेरोजगारी के उन्मूलन का एकमात्र मार्ग निरकुश अधिनायकवाद ही नही है, लोकतत्री तरीकों से भी इन्हे मिटाया जा सकता है—आर्थिक उन्नयन के लिए वैयक्तिक स्वतन्त्रता का हनन बिलकुल जरूरी नही है। यह ठीक है कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था 'पूंजीवादी' है, लेकिन यह पूंजीवाद उस पूंजीवाद से बिलकुल भिन्न है जो मार्क्स को लन्दन के गन्दे और सकुचित कारखानों में दिखाई दिया था। तथापि यह नवीन प्रकार की पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था अब भी परीक्षण के दौर से गुजर रही है, और शायद कोई अमेरिकी भी निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि उनकी वर्तमान अर्थ-व्यवस्था शत प्रतिशत सफल सिद्ध हुई है।

फिर भी, इस अर्थ-व्यवस्था ने कुछ चमत्कारी परिणाम दिखाये हैं, जिनकी उपेक्षा नही की जा सकती। अमेरिका की जनसंख्या ससार की कुल आबादी की लगभग १४ प्रतिशत है और ससार के कुल प्राकृतिक साधन-स्रोतों का १७ प्रतिशत भाग अमेरिका में है। तथापि आज अमेरिका का उत्पादन संसार के कुल उत्पादन का ५० प्रतिशत है। दुनिया भर के कारखानो में जितनी वस्तुओं का निर्माण होता है उनका लगभग एक तिहाई भाग अमेरिका में बनता है।

और, इस भारी सफलता का मूल मन्त्र है व्यापक उत्पादन, व्यापक खपत और व्यापक क्रय-शक्ति। यूनान के सुप्रसिद्ध लेखक और पत्रकार डॉ० डी० जी० कसूलस ने अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की इस त्रिविध क्रियाशीलता का बड़े निकट से अध्ययन किया है। आशा है उनकी 'की टू इक्नोमिक प्रोग्रेस' का यह हिन्दी रूपान्तर पाठकों को दिलचस्प लगेगा।

वासुदेव झा
वित्त वाणिज्य समीक्षक, 'नवभारत टाइम्स'

भूमिका

"...आज मानव और शासन के दो महान दर्शन चल रहे हैं और यह आज के जीवन का केन्द्रीय तथ्य है। ये दोनो ही दर्शन संसार के लोगों की मैत्री, श्रद्धा और समर्थन प्राप्त करने के लिए एक दूसरे से होड़ ले रहे है।"

इन शब्दो के साथ प्रेसिडेण्ट आइजन हावर ने मानवता के आज के व्यापारिक मर्म को छू लिया है। वास्तव मे, हमारे युग का एक बुनियादी मसला यही है कि क्या लोग अपनी राजनीतिक और वैयक्तिक स्वतन्त्रता को सर्वसत्ताधारी राज्य की बलिवेदी पर होम किए बिना भी आर्थिक समृद्धि प्राप्त कर सकते है? यह कोई कोरे वाद-विवाद का ही प्रश्न नही, मानवता का भविष्य बहुत कुछ इसी पर निर्भर होगा कि लोग इस समस्या का समाधान कैसे करते हैं।

सभ्य समाज के आरम्भ से ही, जिनमे राजनीतिक अथवा आर्थिक शक्ति लोगो पर हावी करने की सामर्थ्य थी वे ही नेतृत्व और निर्देश करने की स्थिति में थे। हमारी आज की दुनिया मे, एक अधिनायकवादी राज्य राजनीतिक और आर्थिक, इन दोनों ही तत्वों को एक सर्वसत्ताधारी ढाँचे में सयोजित करता है, और इस ढाँचे का नियत्रण एकमात्र राजनीतिक आर्थिक पिरामिड पर बैठे मुट्ठी भर लोग ही करते हैं। इसके विपरीत-आधुनिक लोकतत्र में शक्ति—चाहे उसका स्रोत राजनीतिक गति-विधियाँ हो अथवा आर्थिक—पृथक, पर परस्पर निर्भर हजारों इकाइयों के सुपुर्द रहती है। क्योकि ये इकाइयाँ समाज के प्राय: सभी विभागों का प्रतिनिधित्व करती है, इसलिए कोई भी सुविधा-सम्पन्न दल या वर्ग सम्पूर्ण सामाजिक ढाँचे पर अपना एकच्छत्र नियंत्रण स्थापित कर नही सकता।

किसी भी उन्नत समाज की एक बुनियादी विशेषता है उसका औद्योगिक आधार। इस माने में, अमेरिका और सोवियत रूस में एक

समानता है : दोनों ही औद्योगिक राज्य हैं। लेकिन, यह समानता यहीं तक है। सोवियत रूस में औद्योगिक व्यवस्था सर्वसत्ताधिकारी राजनीतिक आर्थिक ढाचे का एक अंग है, जब कि अमेरिका की औद्योगिक व्यवस्था एक लोकतंत्री ढाचे के अन्तर्गत संचालित होती है। अमेरिकी लोकतन्त्र के इन्ही सामान्य पहलुओ के आधार पर आज की अमेरिकी आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्गत काम करनेवाले कुछ सिद्धान्तो को स्पष्ट रूप से निखारने के लिए इसे लोकतन्त्री उद्योगवाद का नाम दिया जा सकता है।

o o o

अमेरिका औद्योगिक व्यवस्था का लोकतन्त्रीय ढांचा है। अतः आज के मसलो के समाधान की खोज मे भटकती दुनियाँ के लिए अमेरिकियों का अनुभव व्यावहारिक दृष्टि से अर्थपूर्ण है। वैयक्तिक जीवन-स्तर के रूप में लोकतन्त्री उद्योगवाद की अमेरिकी व्यवस्था की आश्चर्यजनक उन्नति और उपलब्धियाँ इस बात का उत्साहवर्द्धक प्रमाण है कि सामाजिक न्याय और आर्थिक समृद्धि उस समाज में अधिक भली प्रकार प्राप्त हो सकती हैं, जहाँ 'व्यक्ति' स्वतन्त्र है।

बहुत से लोग यह सोचते प्रतीत होते है मानो अमेरिका की प्रगति कही शून्य से ही आविर्भूत हुई है। वे उन तत्त्वो की उपेक्षा कर देते है, जिनके कारण यह प्रगति सम्भव हुई है। ये तत्त्व है राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था। कुछ लोग आर्थिक विकास की सर्वसत्ताधिकारी राज्य-व्यवस्था के अनुयायी होते हुए भी जानते हैं कि वे तथ्यो की उपेक्षा नहीं कर सकते और अपने को एक विचित्र स्थिति में पाते है। वे अमेरिकी उपलब्धियों को तो स्वीकार करते हैं; पर उस व्यवस्था, विशेषकर पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था को मान्यता देने से कतराते हैं।

हमारे युग के अन्य अनेक शब्दों की तरह 'पूंजीवाद' शब्द के भी इतने अर्थ हो गये हैं कि 'पूंजीवाद' में अन्तर्निहित अर्थ का सही बोध नहीं हो पाता। कुछ लोगों की दृष्टि में तो यह एक बदनाम शब्द है। इसका सम्बन्ध अपने-आप उस स्थिति से हो जाता है, जिसमें बहुसंख्यक

लोग तो नितांत गरीबी से ग्रस्त हो, और मुट्ठी भर लोग दूसरों को भड़काने वाली सम्पन्नता के अधिकारी हो। मै स्वीकार करूँगा कि आज से ७ वर्ष पूर्व फुलब्राइट छात्रवृत्ति लेकर अमेरिका जाने और वहाँ पूंजीवाद को नजदीक से देखने से पूर्व मेरे मन मे भी ऐसी ही भ्रान्ति थी।

पूजीवादी देश का जो नक्शा मेरे सामने आया उसे देखकर मैं चक्कर में पड गया—वहाँ के बहुमख्यक न तो कंगाल थे और न ही मुट्ठी भर लोग सर्वशक्तिमान धनिक। पाँच वर्ष तक मैं इस विषय का बडी उत्सुकतापूर्वक अध्ययन करता रहा। अन्ततोगत्वा मुझे विश्वास हो गया कि एक ऐसा भी पूंजीवादी देश है, जिसने श्रेष्ठ प्रगतिशील समाजवादी चिन्तकों की सैद्धान्तिक माँगें और आश्वासनो, विशेष रूप से राष्ट्रीय सम्पत्ति के उचित बँटवारा सम्बन्धी उनकी खोज को किसी न किसी तरह मूर्त रूप दे दिया है। और मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि, अमेरिका में **पुराने प्रकार के पूंजीवाद का स्थान भिन्न सिद्धान्तों पर आधारित एक नयी अर्थ-व्यवस्था ने लिया है।**

मैने अनुभव किया कि, जो कुछ मैने सीखा है, उसकी ओर यूनान के अन्य भाइयों का ध्यान आकृष्ट करूँ। कारण, कुछ समय पूर्व उनके मन में मेरी ही तरह अमेरिका की महानता के कारणो की गदली और अव्यावहारिक धारणा थी। मैने आधुनिक अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्ध मे अपने विचारो को १५ लेखो की एक माला के रूप में प्रस्तुत किया। ये सारे लेख यूनान के ६ दैनिक पत्रो मे प्रकाशित हुए थे। इसके अतिरिक्त अमेरिका तथा दुनिया की घटनाओ पर 'लेटर्स फ्राम वाशिंगटन' शीर्षक नियमित स्तम्भ के अन्तर्गत एक राजनीतिक समीक्षा भी प्रकाशित हुई। उन लेखो पर जो अनुकूल प्रतिक्रिया हुई, उसने मुझे यह पुस्तक लिखने को प्रोत्साहित किया है। यह पुस्तक अंग्रेजी में इसलिए लिखी है ताकि दुनियाँ के अधिक से अधिक लोग इसे पढ़ सके।

o o o

तथापि, यह अमेरिकी व्यवस्था कोई काल्पनिक रामवाण नही है,

जो दुनिया की सारी सामाजिक और आर्थिक बुराइयों को चुटकी बजाते ही दूर कर दे। वस्तुत', अमेरिकी व्यवस्था के विकास के लिए पहले से कोई बना-वनाया खाका नही था, ये तो कुछ लचीले सिद्धान्त हैं, जो लोकतंत्र के ढाँचे के अन्तर्गत वर्षों का परीक्षण और गलतियों के परिणामस्वरूप निकले हैं। सबसे अर्थपूर्ण बात तो यह है कि यही सिद्धान्त वास्तविक अनुभवो की खरल मे रगड खाने के बाद आर्थिक विकास के सम्बन्ध में मार्क्सवादी मान्यताओ की भ्राँतियों और गलतियों को प्रमाणित कर देते हैं।

संक्रमण और विलास की स्थितियों से निरन्तर गुजर रही इस दुनिया में कट्टरता और लीक पीटने की प्रवृत्ति प्रगति को रोकती है और समस्याओ के समाधान में इनसे बाधा पहुँचती है। क्योंकि अमेरिकी सिद्धान्तों को आवश्यकतानुसार तोड़ा-फोड़ा जा सकता है, इसलिए वे देश भी, जिनकी स्थिति अमेरिका से बिलकुल भिन्न है, गरीबी और गंदगी से दूर उत्तम और समृद्ध भविष्य के मार्ग पर चलते हुए इन सिद्धान्तो को आपका निर्देश-स्तंभ बना सकते है।

परस्पर विरोधी सिद्धान्तो के इस जगल में लोगो को अपना मार्ग निर्धारित कर सकना चारो ओर व्याप्त भ्रान्तियो और जान-बूझकर फैलायी गई विद्रूपता के कारण मुश्किल हो रहा है। इन सिद्धान्तों को प्रस्तुत. करने के पीछे मेरी एकमात्र आशा यही रही है कि इससे छोटे पैमाने पर ही सही इन भ्रान्तियों और विद्रूपताओ के निवारण में, सहायता मिलेगी। एक कहावत भी है—"अधकार को कोसने से अच्छा है कि एक छोटा-सा दिया जला लो।"

—डी. जी. के.

क्रम

प्रथम भाग

द्वितीय भाग

प्रथम भाग

१

क्या अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था सचमुच कोई भिन्न चीज है?

शायद ही ऐसा कोई अमेरिकन होगा, जो इस बात का दावा करे कि उसकी अर्थ-व्यवस्था पूर्णता को प्राप्त हो गई है। मानव के अनुभवों से पैदा होनेवाली प्राय: सभी चीजों की अपनी त्रुटियां, अपनी कमजोरियाँ हैं। इसी प्रकार अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था की अपनी कमियाँ और कमजोरियाँ है। यही नही, वह निरन्तर विकास की स्थिति से गुजर रही है, नई समस्याएँ और नई-नई आवश्यकताएँ निरन्तर पैदा होती रहती हैं।

पूर्णता का दावा करनेवाले किसी भी कट्टरपंथी को आलोचना के लिए अनेक त्रुटियाँ मिलेंगी। लेकिन, यह कोई रचनात्मक और यथार्थवादी दृष्टिकोण नही है। महत्त्व इस बात का है कि अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था की प्रक्रिया को समझा जाय और इसी से उसकी उपलब्धियो, सफलताओ का स्पष्टीकरण हो सकेगा क्योकि तथ्य यह है कि इस धरती पर अमेरिकनो का जीवन-स्तर सबसे ऊँचा हो गया है और वह भी वैयक्तिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता का बलिदान किये बिना। दुनिया की कुल भूमि और आबादी का सिर्फ सात प्रतिशत अमेरिका में है; फिर भी दुनिया में कुल निर्मित माल का ५० प्रतिशत और दुनिया की समस्त जिन्सों और सेवाओं का पैंतीस प्रतिशत से अधिक अमेरिका में पैदा होता है। और, यद्यपि अमेरिकनों का काम का सप्ताह निरन्तर घटाया जा रहा है, तथापि आज उनमें से अधिकतर लोगो को जितना अच्छा भोजन, अच्छा कपड़ा, अच्छा घर, अच्छी शिक्षा और मनोरजन के जितने अधिक साधन उपलब्ध है, उतने पहले कभी प्राप्त नहीं थे।

अमेरिका की आर्थिक शक्ति के साधन

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की आश्चर्यजनक उत्पादन-क्षमता को अमेरिकन और विदेशी, दोनो प्राय ध्रुव सत्य मानते है। इसके कारण के भिन्न-भिन्न स्पष्टीकरण दिये जाते हैं, इनमें से कुछ तो अशत. ठीक हैं और कुछ बिलकुल असम्भव। कुछ लोग इसका सारा श्रेय अमेरिका की भौगोलिक स्थिति और प्राकृतिक साधनो को देते है । उनका कहना है कि अमेरिका बडा धनी देश है, उसके पास उर्वर भूमि, विस्तृत वन-प्रदेश और कोयले, तेल, लोहे, ताबे और यूरेनियम की बडी-बडी खानें हैं। इस छोर से उस छोर तक बहनेवाली उसकी नदियाँ जल-परिवहन, पनबिजली और सिचाई-कार्य के लिए उपयुक्त है। उसकी जलवायु सब मिलाकर समशीतोष्ण है।

कुछ लोग यह भी कहेगे कि अमेरिका को १७ करोड उपभोक्ताओं के विस्तृत बाजार का लाभ प्राप्त है। अमेरिका की औद्योगिक और कृषि-जन्य वस्तुएँ निर्वाध रूप मे देश के एक तट से दूसरे तट तक जा-आ सकती हैं; ऐसी कोई कृत्रिम रुकावट नही है, जिससे उनका खर्चा बढ़े अथवा उनके प्रचार और प्रसार में बाधा पहुँचे। उदाहरणार्थ, एक साबुन-निर्माता यह आशा कर सकता है कि प्रति सप्ताह उसकी लाखो साबुन की टिकियाँ मेन से फ्लोरिडा तक और न्यूयार्क से कैलिफोर्निया तक बिक जायेंगी। इस प्रकार, एक साथ लाखों की सख्या मे साबुन तैयार कर वह अपना उत्पादन-व्यय घटा सकता है और अपने साबुन को ऐसे भाव पर बेच सकता है, जो सबकी जेब के अनुकूल हो।

लेखक की राय में, उपर्युक्त विचारों से इसके कारण का पूर्ण स्पष्टीकरण नही होता। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अमेरिका के पास महान् प्राकृतिक साधन मौजूद है। फिर भी, अमेरिका ही ऐसा देश नही है, जिसके पास यह साधन विद्यमान है। बहुत से कच्चे माल के मामले में अमेरिका आत्मभरित नही है। उत्पादक यन्त्रों

के लिए दूसरे देशो से पर्याप्त कच्चा माल, जैसे सीसा, रंग, तांबा, मैगनीज की कच्ची धातु, निकल, जस्ता, रवर आदि मगाना पडता है।

अमेरिका की समृद्धि का कारण उसकी बडी आवादी को वताना क्या सन्तोपजनक माना जायेगा ? ऐसे देश हैं, जिनकी जनसख्या बहुत अधिक है और जिनके विकास की बडी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। फिर भी, उनकी बरावर यह शिकायत रहती है कि हम आवश्यकता से अधिक जनसख्या के कारण परेशान हैं। वास्तव में, यदि बढ़ती हुई आबादी प्रमुख कारण होती, तो चीन अथवा भारत जैसे देश के लोगो का जीवन-स्तर अपने आप ऊँचा हो जाता। वस्तुत बात यह है कि यदि उत्पादन-वृद्धि की गति जनसख्या-वृद्धि की रफ्तार से अधिक तेज न हुई, तो जीवन-स्तर गिरेगा, उठेगा नही।

एक और वात है, जिस पर हम आगे चलकर अधिक विस्तार के साथ विचार करेंगे, और वह यह कि आबादी आर्थिक प्रगति का एक तत्व तभी हो सकती है, जबकि वह आर्थिक जीवन मे पूरी तरह भाग ले। दूसरे शब्दो मे, किसी भी अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत लाखों-करोड़ो लोगो का रहना ही पर्याप्त नही है। आबादी की उपयोगिता का निर्णय तो इसी बात से हो सकता है कि कितने लोग पूर्णत. उत्पादक के रूप में भाग लेते हैं। इससे भी कही अधिक महत्त्वपूर्ण तत्व यह होगा कि कितने लोग उपभोक्ता के रूप मे उस अर्थ-व्यवस्था में शामिल हैं।

सक्षेप में, प्राकृतिक साधन और बढती हुई आवादी अपने आप में समृद्धि और प्रगति के आधार नही हो सकते। इन दो चीजों की तुलना रासायनिक प्रक्रिया में आनेवाली प्रतिक्रियाशील तत्वो से की जा सकती है। ये प्रतिक्रियाशील तत्व तबतक निष्क्रिय रहते हैं, जबतक उन्हे दूसरे सम्मिश्रण में परिणत करने के लिए कोई अन्य उत्तेजक तत्व नही डाला जाता। अमेरिका के मामले में, यह उत्तेजक अथवा प्रेरक तत्व उसकी लोक-तंत्री उद्योगवाद की राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था है, जो विभिन्न तत्वों को प्रेरित कर उन्हें सबकी समृद्धि के रूप में परिणत कर देती है।

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की एक बड़ी नयी बात

हम प्राय. सुना करते है कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था कुछ भिन्न चीज है, वह मानव के अनुभवों मे बहुत कुछ अभूतपूर्व, अद्वितीय है। इसमे कोई सन्देह नही कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की बहुत सी बाते अद्वितीय हैं और उन पर हमें पूरा ध्यान देना चाहिए। इस पुस्तक के अधिकाश में उन्ही बातों की चर्चा की जायेगी। उनमे से कुछ तो दूर से दिखाई देनेवाले उस हिमखण्ड के समान हैं, जो समुद्र की सतह से ऊपर सफेद-सफेद दिखाई देता है। लेकिन, अमेरिकी आर्थिक प्रणाली के अनोखेपन को समझने के लिए हमे उसके सभी सिद्धान्तो को देखना पडेगा—उस अश को भी देखना पडेगा, जो सतह के नीचे छिपा हुआ रहता है और कुल व्यवस्था का $\frac{7}{8}$ हिस्सा है।

मार्क्स ने इस बात पर बल दिया है कि, 'पूँजीवादी' उत्पादन उस आर्थिक 'नियम' पर आधारित होता है, जिसके अन्तर्गत मजदूर एक जिन्स माना गया है और अन्य वस्तुओ की तरह उस जिन्स का भी एक बाजार भाव है। मार्क्स की परिभाषा के अनुसार श्रम का मूल्य वस्तुओ (माल और सेवाओ) के उस ढेर का योग है, जो 'श्रमजीवी वर्ग" के जीवित रहने और उसकी वशबेल चलाने के लिए आवश्यक है। मार्क्स का कहना है कि कोई पूँजीपति मजदूरो को उनकी मजदूरी के मूल्य से अधिक नही देगा, चाहे तकनीकी ईजादो और उच्चतर उत्पादन-क्षमता के फलस्वरूप उत्पादन कितना भी बढ जाये। इसी सैद्धान्तिक केन्द्र बिन्दु से अधिकतर मार्क्सवादी सिद्धान्त निकले है। 'मजदूरो का पूँजीवादी शोषण', यह नारा भी उक्त केन्द्रीय सिद्धान्त से ही निकला है।

मार्क्स के युग की अपनी परिस्थितियाँ थी। मार्क्स ने उन्हे ही पूँजीवादी व्यवस्था के नमूने के रूप में सामने रखा। फलत. 'श्रम के मूल्य' की परिभाषा करने में उसने कुछ हद तक गलती कर दी। यह ठीक है कि उसके जीवन-काल में मजदूर को एक जिन्स माना जाता था। वस्तुतः आज भी दुनिया के कुछ हिस्सों में मजदूर को एक 'जिन्स'

माना जाता है और उसको मेहनताना उसी रूप में दिया जाता है। लेकिन अमेरिका ने इसमें एक नया तत्व जोड दिया है, जो बहुत ही अर्थपूर्ण है। मजदूर, अर्थात् जीविका के लिए श्रम करनेवाला प्रत्येक अमेरिकी अब किसी मूल्य विशेष की जिन्स मात्र नही रह गया है, बल्कि अब उसको संभाव्य उपभोक्ता माना जाता है। इसी क्रान्तिकारी दृष्टिकोण के आधार पर कई नये कदम उठाये गये है, जिनका एक ही प्रमुख उद्देश्य है, और वह यह कि अमेरिका के जन-सामान्य की क्रय-शक्ति को सुरक्षित रखकर उसे और बढाया जाये।

यह जरूर है कि वैयक्तिक मेहनताने का निर्धारण व्यक्ति के काम के आर्थिक महत्त्व के आधार पर अपने आप होता है। क्षमता, शक्ति, शिक्षण और पहल करने की दृष्टि से आदमी आदमी में फर्क होता है। इसीलिए, किसी भी अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत पारिश्रमिक का मान भिन्न भिन्न होता है। लेकिन बुनियादी बात तो यह है अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत मजदूरो को, सभी श्रमजीवी अमेरिकियो को, उनकी मेहनत का मुआवजा इस प्रकार दिया जाता है कि उससे न केवल वे जीवित रहें और उनकी वशबेल जारी रहे, बल्कि उनकी क्रय-शक्ति भी बनी और बढती रहे, क्योंकि व्यापक उत्पादन पर आधारित स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था में जनता की क्रय-शक्ति को बनाये रखना जरूरी है।

पुराने पूँजीवादी उत्पादन की व्यवस्था कुछ चुने हुए खास उपभोक्ताओ को सतुष्ट करने के लिए ही की जाती थी—कुछ देशो में अब भी ऐसा होता है। मजदूरो का शोषण एक वास्तविक सम्भावना थी। लेकिन जब मजदूर और उपभोक्ता एक व्यक्ति में ही सवेष्ठित हो गये, जब मजदूर उपभोक्ता अपने आप में एक मान्य एकक बन गया, तब पुरानी पूँजीवादी व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तो में बुनियादी परिवर्तन हुए। अब 'पूँजीपति' मजदूर का शोषण नहीं कर सकता था, क्योंकि वही मजदूर अब प्रमुख उपभोक्ता भी होने जा रहा था। 'मजदूरों के शोषण' का सिद्धान्त उस निजी उद्योगों वाली अर्थ-व्यवस्था पर लागू नही होता,

जहाँ मेहनतकशों को प्रमुख उपभोक्ताओ के रूप मे भी देखा जाता है।

मजदूर उपभोक्ता की यह पहचान अमेरिकी व्यवस्था का एक बुनियादी ईजाद है। अमेरिका की आर्थिक विचारधारा पर इस सिद्धान्त का कितना प्रभाव पड़ा है, इसका स्पष्टीकरण स्वचालन की क्रांतिकारी प्रक्रिया पर अमेरिकी मजदूर यूनियनों की प्रतिक्रिया से ही हो जायेगा।

स्वचालन प्रक्रिया अमेरिकी उद्योगो में एक वास्तविकता बन चुकी है। उत्पादन के इस उन्नत तरीके में मजदूर का स्थान स्वचालित नियंत्रण यन्त्र ले लेते है। दूसरे शब्दो में, स्वचालित नियन्त्रण यन्त्रों द्वारा पेचीदा मशीनें और सम्पूर्ण कारखाने तक चलाये जाते है। इस कार्य में मजदूरों का प्रत्यक्ष रूप से कोई हाथ नही होता, वे केवल देख-भाल करनेवाले कारीगरों के रूप में खास-खास स्थानों पर रहते हैं। यह स्वचालन प्रक्रिया निर्माण कारखानो तक ही सीमित नही है, तथा-कथित 'बिजली के मस्तिष्क' आफिस क्लर्को, एकाउण्टेंटों तथा अन्य सफेदपोश कर्मचारियों का स्थान भी लेते जा रहे है।

इस स्वचालन प्रक्रिया के फलस्वरूप किसी एक काम को, अथवा उससे भी बडे काम को पूरा करने के लिए पहले से कम मजदूरो की आवश्यकता होती है। पुरानी पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत मालिकों की दृष्टि मे ऐसे मजदूरों का कोई 'मूल्य' नही रह जाता, जिनकी सेवाओ की जरूरत नहीं होती। यह सच है, लेकिन तभी जब हम मजदूर को सिर्फ एक जिन्स के रूप में देखते हैं। परन्तु मजदूर अब तो उपभोक्ता भी है, जिसके कारण ही बड़े पैमाने पर उत्पादन आर्थिक दृष्टि से लाभ-दायक हो पाता है। अपने आप चलनेवाली मशीने, मोटर गाड़ियाँ, कपड़े अथवा खाने की चीजें नहीं खरीद सकती। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि व्यापक उत्पादन के साथ व्यापक बेरोजगारी चल नही सकती।

कहने की जरूरत नहीं कि इस मजदूर उपभोक्ता की क्रय शक्ति को बनाए रखना सरकार, व्यापार और मजदूर यूनियनो के लिए समान रूप से हितकारी है। यही कारण है कि, अमेरिकी फेडरेशन ऑफ लेबर

कॉंग्रेस ऑफ इडस्ट्रियल आर्गेनाइजेशन्स के उपाध्यक्ष वाल्टर पी० रिउथर जैसे व्यक्ति को इस स्वचालन प्रक्रिया के आगमन से कोई भय नही है। वे इसका स्वागत ही कर रहे हैं। जैसा कि श्री रिउथर ने बताया है :

'...यह आवश्यक नही रह गया है कि हम संसार की दुर्लभ वस्तुओं के विभाजन के लिए सघर्ष करने में जूझते रहे.. पूरा विश्वास है कि हमें इन मशीनो और तरीको से झगडा करने की जरूरत नही, बल्कि हम उनका उपयोग हर जगह के मानव को स्वास्थ्य और सुख, सुरक्षा और अवकाश तथा शान्ति और स्वतन्त्रता उपलब्ध करने के लिए करेंगे।" (आर्थिक स्थायित्व सम्बन्धी अमेरिकी कांग्रेस उपसमिति के सामने बयान १७ अक्तूबर, १९५५)।

यह विश्वास कोई अनुत्तरदायित्वपूर्ण आशावाद अथवा खोखला शब्द-जाल नही है। यह विश्वास इस जानकारी पर आधारित है कि स्वचालन प्रक्रिया के कारण बेकारी बढना कोई जरूरी नही। इसके विपरीत यह आशा करना आर्थिक तौर पर अधिक वास्तविक होगा कि मजदूर उपभोक्ता की क्रय-शक्ति को बनाये रखने के प्रयास में उद्योग को नई चीजें बनाने और नये काम निकालने का समय मिलेगा। व्यक्तियो, यहाँ तक कि, सम्पूर्ण समुदायो की कठिनाइयो के समाधान के लिए दूरदर्शिता और बडी समझ की जरूरत पडेगी। लेकिन, श्री रिउथर के शब्दों में, 'यदि इस बार के व्यापक सामाजिक उथल-पुथल को रोकना है, तो इसमें निजी दलो और सरकार का सम्मिलित विवेक इस्तेमाल करना पड़ेगा।' सामाजिक उथल-पुथल को रोकने और स्वचालन की क्रान्तिकारी प्रक्रिया से सम्बद्ध समस्याओ को सुलझाने के पीछे एक ही प्रेरक सिद्धान्त होगा और वह यह कि, व्यापक उत्पादन के लिए व्यापक खपत जरूरी है और इसी प्रकार व्यापक खपत का आधार व्यापक क्रय-शक्ति ही हो सकती है। अमेरिकी आर्थिक प्रणाली मे सामान्य नागरिक के लिए उच्च जीवन-स्तर सिर्फ एक मानवीय परोपकार की बात नही, बल्कि एक आर्थिक आवश्यकता है।

२

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की कुछ बुनियादी विशेषताएँ

व्यापक उत्पादन के लिये व्यापक खपत जरूरी है और व्यापक खपत व्यापक क्रय-शक्ति पर निर्भर है; इस बुनियादी सिद्धान्त से अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की कई दिलचस्प विशेषतायें निकली हैं। इन से एक ऐसी अर्थ-व्यवस्था का दिग्दर्शन होता है जो उस 'पूँजीवाद' से जिसका नक्शा बहुत से लोगों के दिमाग में 'एकाधिकारी', 'शोषण' अथवा 'वर्ग-संघर्ष' की चर्चा करते समय रहा करता है।

कम लाभ पर व्यापक उत्पादन

मुनाफा कमाना निजी उद्योग का प्रमुख उद्देश्य रहा है। फिर भी, मुनाफा 'श्रमजीवी वर्ग' के शोषण का माप न होकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आर्थिक पार्ट अदा करता है। पैसे लगानेवाले को उसकी पूंजी पर उचित फायदा पहुँचाने के अतिरिक्त मुनाफा उत्पादक सम्पदा के नवीकरण और विस्तार के लिए पूंजी का प्रमुख स्रोत होता है। उदाहरणार्थ, १९५० मे अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था को ३९१७ अरब डालर का सकुल लाभ हुआ। उसी वर्ष कम्पनियो को कर चुकाने के बाद २१ अरब डालर का शुद्ध लाभ रहा। इस राशि मे से लगभग ११ अरब डालर लाभांश और व्याज के रूप में लाखों वैयक्तिक नियोजकों को मिला। शेष १० अरब डालर का उपयोग नवीकरण, विस्तार और अनुसधान कार्यों पर हुआ।

इससे इनकार नही किया जा सकता कि इक्कीस अरब डालर एक बड़ी धनराशि है। फिर भी, यह ध्यान देने की बात है कि इतनी बड़ी राशि इस कारण नहीं आयी कि, प्रति इकाई कोई बड़ा लाभ कमाया

गया; बल्कि वह भारी पैमाने पर होनेवाली बिक्री का परिणाम ही थी। और इतनी अधिक राशि इसलिए सभव हुई कि उसके लिए एक विस्तृत उपभोक्ता बाजार मौजूद था। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की एक बड़ी विशेषता यह है कि अधिकतर निर्जी प्रतिष्ठान प्रति इकाई बहुत कम लाभ उठाते है। साबुन की लाखो टिकियो पर प्रति टिकी एक पेनी लाभ के हिसाब से प्रति वर्ष लाखो डालर का लाभ बैठता है।

यदि प्रति इकाई अधिक लाभ उठाने के उद्देश्य से किसी वस्तु का दाम बहुत ऊँचा कर दिया जाये, तो हो सकता है उपभोक्ता उसे खरीदने मे असमर्थ हो जाये अथवा उसे खरीदना ही न चाहे। इसी कारण अमेरिकी उद्योगपति प्रति इकाई ज्यादा मुनाफा उठाने की कोशिश नही करता। उसका लक्ष्य यही रहता है कि उत्पादन के अच्छे तरीके अपनाकर उत्पादन-व्यय घटाया जाये। इसके लिए व्यापक उत्पादन, व्यापक खपत और प्रति इकाई कम लाभ, इन तीन बातो को एक साथ मिलाने का वह प्रयास करता है। पिछले बीस साल मे अमेरिकी उद्योगपतियो ने जो औसत शुद्ध लाभ उठाया है, वह कुल बिक्री के पाँच प्रतिशत से अधिक नही रहा है।

व्यापक क्रय-शक्ति

प्रति इकाई कम लाभ पर व्यापक उत्पादन अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का एक विशिष्ट पहलू है। लेकिन, व्यापक उत्पादन तब तक बना नही रह सकता, जब तक उसे खपा लेने की आर्थिक सामर्थ्य जनता में न हो। आखिर, उत्पादन का आधारभूत औचित्य ही क्या है, यदि वह मानव की आवश्यकताओ को पूरा न कर सके? फलत व्यापक उत्पादन व्यापक क्रय-शक्ति पर निर्भर होता है, अर्थात् उत्पादन की मात्रा का निश्चय इस बात पर होता है कि मजदूरी और मूल्यो का सम्बन्ध क्या है और उससे अधिक से अधिक लोगो को अधिक से अधिक परिमाण मे ज्यादे से ज्यादा वस्तुएँ खरीदने का अवसर मिलता है या नही।

•

व्यापक उत्पादन वाली अर्थ-व्यवस्था में यदि किसी खास उत्पादन के मामले मे मूल्य बहुत ऊँचे रहे और मजदूरी बहुत कम रहे, तो वह अर्थ-व्यवस्था संकट में पड जायेगी। व्यापारियो, मजदूर यूनियनो और सरकार को अपनी अपनी कुशलता दिखाने की स्वतत्रता देकर इतना बढिया संतुलन रखा जाता है कि उपभोक्ताओ के विस्तृत बाजार पर कोई आच न आने पाये।

उपभोक्ता बाजार का द्विविध विस्तार

उपभोक्ता बाजार को स्थायी और प्रगति का एक तत्व बनाये रखने के लिए, इसका दुतरफा विस्तार होना जरूरी है। इसका एक विस्तार है क्षैतिज : उपभोक्ता बाजार देश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैला होना चाहिए। दूसरा विस्तार है उर्ध्वतन, अर्थात् ऊपर की ओर : सभी वर्गों के लोगों में इतनी आर्थिक सामर्थ्य होनी चाहिए कि वे उपभोक्ताओं के रूप मे आर्थिक चक्र के साथ चल सकें। इसका अभिप्राय यह हुआ कि व्यापक उपभोक्ता बाजार में उपभोग्य जिन्स का अभाव अधिक समय तक नही रह सकता। 'धन का शृगार' समझी जानेवाली वस्तुओं को भी जल्द से जल्द 'व्यापक खपत वाली चीजो' के रूप में बदल देना पड़ेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था अनुसधान कार्यो पर तो निर्भर है ही, साथ ही साथ यहाँ इस बात का निरन्तर प्रयास किया जाता है कि सभी प्रकार की वस्तुएँ तैयार करनें के अधिक अच्छे और कम-खर्च तरीके निकाले जायें।

प्रतियोगिता के रूप

सोवियत रूस जैसी बिलकुल एकाधिकारवादी अर्थ व्यवस्था मे उपभोक्ता के सामने पसद-नापसद का कोई सवाल नही होता। उसे एकाधिकारी राजकीय उद्योगो द्वारा उत्पादित वस्तुओ से ही संतोष करना पडता है। दूसरे, इस प्रकार के उद्योगो को पूरा इत्मीनान रहता है कि उनके उपभोक्ता बंधे बंधाये हैं, इसलिए उपभोक्ता क्या चाहता है और

क्या नही चाहता, इस पर विचार करना उनके लिए आवश्यक नही रह जाता।

स्वतंत्र उद्योगों वाली अर्थ-व्यवस्था की स्थिति इसके ठीक विपरीत होती है। जैसा कि हम आगे चलकर देखेगे, अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में तीन प्रकार की प्रतियोगिताएँ चलती है। एक तो बिलकुल 'प्रत्यक्ष' प्रतियोगिता है, जो एक ही प्रकार की वस्तुएँ बनानेवाले उद्योगो में चलती है। दूसरी प्रतियोगिता 'अप्रत्यक्ष' है, और वह उन उद्योगो में चलती है, जो प्राय. मिलती-जुलती वस्तुएँ अथवा सेवाएँ उपलब्ध करते है, अर्थात् विभिन्न प्रकार के परिवहन, जैसे बसें, ट्रक, विमान, रेल, नौकाएँ अथवा ईंधन, जैसे तेल, गैस, कोयला और बिजली। तीसरी प्रतियोगिता इन दोनो से भिन्न है। इसे समतोलक शक्तियो की आंतरिक रगड कहना ज्यादा ठीक रहेगा : खुदरा विक्रेता बनाम निर्माता, निर्मित माल उत्पादक बनाम बुनियादी माल उत्पादक, मजदूर यूनियन बनाम मालिक, उपभोक्ता बनाम उत्पादक और इन सबको बिखरे हुए, पर शक्तिशाली सार्वजनिक राय का सामना करना पड़ता है।

नये माल और उत्पादक तरीकों की निरंतर खोज

प्रतियोगितामूलक अर्थ-व्यवस्था में उदासीनता और राम नाम से ही संतोष कर लेने की बहुत कम गुंजाइश रहती है। यदि आपके किसी प्रतिद्वन्द्वी ने एक अच्छी चूहेदानी—पहले से अच्छी चीज—बना ली, तो बाजार में आपकी स्थिति कमजोर हो जाएगी। अत. कारोबारियों को हमेशा सतर्क रहना जरूरी है। किसी बात को वेद-वाक्य मानकर स्वीकार कर लेना, यह मान लेना कि 'सदा से यही परम्परा रही है', पुराने विचारों तथा तरीकों को पकडे रहना स्वतत्र अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत निजी उद्योग के लिए आत्मघातक है। 'जनरल इलैक्ट्रिक' कम्पनी के एक नारे के अनुसार 'प्रगति किसी भी स्वतत्र अर्थ-व्यवस्था का सबसे महत्त्वपूर्ण फल है'। प्रगति का क्रम न रुकने पाये, इसके लिए

अमेरिकी व्यापारियो को निरन्तर नयी और पहले से अच्छी चीजे बनाने के लिए चौबीसों घंटे काम करना पडता है। नयी, अधिक कुशल, अधिक व्यवहार योग्य अथवा अधिक आकर्षक चीजो की खोज अब उन आविष्कारको का एकात प्रयास नही रह गयी है, जिन्हे लोग अक्सर गलत समझते रहे हैं, बल्कि अब वह एक जागरूक प्रक्रिया बन गयी है, जिसे व्यापारियो ने अपने एक प्रमुख कर्तव्य के रूप में अपना लिया है। सिर्फ १९५७ में अमेरिकी कार्पोरेशनो ने अनुसंधान और विकास पर ६ अरब डालर खर्च किया।

व्यापार और शिक्षा

वैज्ञानिक अनुसधान आज अमेरिकी निजी उद्योग का प्रमुख कर्त्तव्य बन गया है। वैज्ञानिक, शिक्षक, विशेपज्ञ अब व्यापारिक दुनिया के लिए अजनबी नही रह गये है; और न ही आधुनिक व्यापारी वह भद्दा आदमी रह गया है, जिसे कार्टून बनानेवाले अक्सर चित्रित करते रहे हैं। अक्सर उसके पास कालिज की डिगरियाँ होती हैं और अब महत्त्वपूर्ण व्यापारिक कार्पोरेशनो के उच्च पदों पर इंजीनियरो, वैज्ञानिको और शिक्षाविदों की नियुक्ति एक साधारण बात हो चली है। व्यापार और शिक्षा की पारस्परिक निर्भरता अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का दूसरा विशिष्ट पहलू है।

उत्पादन क्षमता और मानव सम्बंध

व्यापार के एक दूसरे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र पर भी विज्ञान का प्रभाव है। वह क्षेत्र है मानव सम्बन्धो का। कर्मचारियों को अब सिर्फ 'हाथ' नही माना जाता। वे सम्मान के अधिकारी माने जाते है। मनोविज्ञानवेत्ता आज अनेक कार्पोरेशनों का अनिवार्य स्टाफ सदस्य हो गया है। इसका परिणाम यह निकला है कि आज व्यवस्थापको और मजदूरो के सम्बन्ध पहले से अधिक अच्छे है।

इसका उद्देश्य सिर्फ व्यवस्था विभाग के प्रति सद्भावना पैदा करना नहीं है। ये स्वस्थ सम्बन्ध वस्तुत: उच्चतर उत्पादन-क्षमता के लिए भी

जरूरी है। व्यापक उत्पादन वाली स्वतंत्र अर्थ-व्यवस्था में अच्छे मानव सम्बन्ध उन वैज्ञानिक तरीको के अभिन्न अंग बन गये हैं जो आर्थिक प्रगति का क्रम जारी रखने के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं।

प्रतिभाशाली लोगों की तलाश

प्रतियोगितामूलक अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में प्रतिभा को बहुत अधिक महत्त्व दिया जाता है। पिता की प्रतिभा पुत्रो मे भी रहे यह कोई जरूरी नही। इस कारण पुराने प्रकार के पारिवारिक व्यापार का स्थान धीरे-धीरे आधुनिक कार्पोरेशन ने ले लिया है।

इस प्रकार के व्यापारिक सगठन में एक नया व्यवसायी अग्रिम पक्ति में आता जा रहा है। वह है व्यापार व्यवस्थापक। उसके मूल, उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि और इसी प्रकार की अन्य बातो का उतना महत्त्व नही होता। प्रशासन की प्रतिभा, प्रखर बुद्धि, शिक्षा-दीक्षा, क्षमता—ये ही वे योग्यताएँ है, जिन्हे सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है। धनहीन प्रवासी अथवा एक खान मजदूर का बेटा भी 'यू० एस० स्टील' अथवा 'ट्वटिएथ सेन्चुरी फाक्स' जैसे बडे कार्पोरेशन का अध्यक्ष बन सकता है। बेंजामिन फेयरलेस अथवा स्पाइरस स्कूरस इसके उदाहरण हैं।

किसी उच्च अधिकारी के लड़के को अपने पिता के चरण-चिन्हों पर चलने का अवसर मिल सकता है, बशर्ते कि उसमे नेतृत्व और जिम्मेदारी सम्हालने की योग्यता हो। तथापि, एक प्रतियोगितावादी अर्थ-व्यवस्था में शायद ही कोई उद्योग अधिक समय तक सफेद हाथी बाँधने की जुर्रत करेगा।

उद्योगपति के लिए नयी चिन्तन धारा

ये नये व्यावसायिक लोग—व्यापार व्यवस्थापक—एक समाज के नही होते, इन व्यापार जादूगरों का कोई मानक नही है। ये भी मनुष्य ही हैं। इनमें भी अन्य लोगो की तरह अपनी शक्ति और सीमाएँ होती हैं। वैयक्तिक रुचि और पृष्ठभूमि के अनुसार उनके प्रेरणा-तत्त्व भी भिन्न

होते हैं। तथापि, उनमे एक बात समान रूप से होती है : व्यापार के सामाजिक कर्त्तव्य के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण। वे दिन लद गये जब उद्योगपतियो के चिन्तन का श्रीगणेश और अन्त 'मुनाफा' से ही होता था।

आधुनिक व्यापार की पेचीदगी और समाज के सभी पहलुओ पर उसके प्रभाव को देखते हुए आज का व्यापार व्यवस्थापक सिर्फ मुनाफे, बाजारो और उत्पादन के उतार-चढाव के चक्कर में नही रह सकता। उसे समाज के विस्तृत ढाँचे पर भी ध्यान देना पडता है, व्यापार जिसका मात्र एक अग है। आधुनिक व्यापार व्यवस्थापक की प्रमुख दिलचस्पी इसमें होगी कि समृद्धि का क्रम निरन्तर बना रहे, जल्द से जल्द अनुत्तरदायित्व-पूर्ण ढग से मुनाफा कमाने मे वह रुचि नही लेगा। उदार शिक्षा-दीक्षा और अर्थ-व्यवस्था के बुनियादी सिद्धान्तो की अच्छी समझदारी के फल-स्वरूप अधिक से अधिक व्यापार व्यवस्थापक रचनात्मक प्रवृत्ति वाले और समाज के प्रति जिम्मेदार होते जा रहे है। अमेरिकी उद्योग की बागडोर सम्हालने के लिए ऐसे ही लोगो की आवश्यकता है।

विज्ञापन का महत्त्व

अमेरिका में विज्ञापन के सामाजिक तथा आर्थिक महत्त्व पर बल देने की जरूरत नही। यदा-कदा कथित गलत कामों के लिए कड़ी आलोचनाएँ होती रहती हैं, तथापि अमेरिका की प्रगति में विज्ञापन-उद्योग का प्रमुख हाथ रहा है। व्यापक उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्था को व्यापक प्रचार की जरूरत होती है, और यह काम विज्ञापन-उद्योग ही कर सकता है।

प्रतियोगितावादी अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में विज्ञापन न केवल उन चीज़ों को जनता तक पहुँचाता है, जिनको जनता चाह रही होती है, बल्कि वह नयी चीजों के लिए भी लोगों में चाह पैदा करता है। यदि विज्ञापन न हो, तो नयी चीजो के लिए पर्याप्त ग्राहक शायद ही मिलें। यही

नही, क्योकि विज्ञापनों द्वारा अधिक से अधिक लोगो तक सदेश पहुँचाने का प्रयास किया जाता है, इसलिए इसकी प्रवृत्ति सामाजिक भेद को कम करने की ओर होती है। विज्ञापन न केवल जीवन की सुविधाओ को वाछनीय बनाता है, वह उनको कुछ ऐसा रूप देता है कि सामान्य अमेरिकी को भी यह भान हो कि वह अमुक वस्तु खरीदने की स्थिति मे है। कभी-कभी विज्ञापन पर अश्लीलता, कुरुचि और आवश्यकता से अधिक उत्तेजक होने तथा इसी प्रकार के अन्य आरोप आ सकते हैं; तथापि, अमेरिका में विशाल उपभोक्ता बाजार को बनाये रखने मे विज्ञापन का बडा हाथ है।

स्वतंत्र अर्थ-व्यवस्था और मजदूर यूनियन

निजी उद्योग और जागरूक शासन के अतिरिक्त अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था अपने कुशल सचालन के लिए स्वतंत्र और शक्तिशाली मजदूर यूनियन के अस्तित्व पर निर्भर करती है। मजदूरो को अधिक से अधिक सुविधा और लाभ दिलाने के लिए दबाव डाल-डालकर मजदूर यूनियने व्यापक उपभोक्ता बाजार के विकास और सरक्षण में सक्रिय योगदान करती रही है।

अमेरिकी मजदूर यूनियने इस बीसवी सदी में स्वतंत्र उद्योग-पद्धति के उसूलो को मानती हैं और राष्ट्र की आय का एक बडा हिस्सा अपने सदस्यों को दिलाने के लिए जोरदार प्रयास करती है। इस पर बहुत कुछ सेमुएल गोम्पर्स का प्रभाव है। सेमुएल गोम्पर्स बहुत समय तक 'ए० एफ० एल०' के अध्यक्ष रहे थे। अमेरिकी मजदूर का उन्नत जीवन-स्तर इस बात का प्रमाण है कि यह मार्ग चुनना कितना विवेकपूर्ण रहा।

जब मजदूर नेता सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व का पालन करते है और मजदूर को सम्पूर्ण सामाजिक ढाँचे का ही एक अग मानकर चलते है, तभी वे मजदूरों के दीर्घकालिक हितो की रक्षा करते है।

अमेरिकी शासन संतुलन-तत्त्व के रूप में

इस अर्थ-व्यवस्था मे अमेरिकी शासन एक दूसरा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। इसके कार्य-क्षेत्र के विस्तार के बारे मे मतभेद हो सकता है, लेकिन इस प्रकार के शासकीय दायित्वो के प्रश्न पर कोई गभीर मत-भेद नही है।

निजी उद्योग पर आधारित अर्थ-व्यवस्था मे आर्थिक स्थायित्व इस बात पर निर्भर होता है कि, राष्ट्र की उत्पादन तथा उसकी खपत और बचत की क्षमता के बीच कितना सतुलन है। यह सतुलन उतना कड़ा पक्का नहीं है। वह सुरक्षा की विस्तृत सीमाओ के अन्दर चढ-उतर सकता है। अमेरिकी शासन का एक प्रमुख कर्तव्य यह है कि वह यह देखता रहे कि देश की अर्थ-व्यवस्था इन सीमाओ के अन्दर ही रहे; और इस प्रकार शासन उसे भयानक तेजी से भयानक मंदी तक गिरने और समृद्धि से गिरकर अवनति की ओर जाने से रोकता है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि सघीय सरकार ऊपर से कोई कडा भार नही लादती। वह इस बात का निर्णय पहले से ही नही कर देती कि, लोगो को किस चीज की जरूरत होनी चाहिए, उन्हे क्या पसंद होना चाहिए अथवा उनके पास क्या होना चाहिए। कडा नियत्रण और नियमन आर्थिक स्थायित्व लाने के आदिम तरीके हैं। अमेरिकी शासन इसके लिए अधिक उन्नत तरीकों पर निर्भर करता है।

अपनी जिम्मेदारियाँ निभाने के लिए शासन के पास कई आर्थिक और वित्तिक तरीके है। इसके साथ-साथ भविष्यवाणी और मूल्यांकन के विश्वसनीय वैज्ञानिक उपाय भी हैं। सापेक्ष स्थायित्व कायम रखने के लिए अमेरिकी शासन जिन उपायो से काम लेता है, उनमें से कुछ तो ये है : कर आरोप, सरकारी व्यय, सामाजिक विधि-विधान आदि-आदि।

× × ×

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के उपर्युक्त सिद्धान्त और विशेषताएँ कोई

अमिट कानून नहीं, जिनका विश्वासपूर्वक पालन करने से सभी समस्याओं का समाधान हो जाये । ये सब सामान्य मान्यताएँ हैं, जिन पर परिस्थिति के अनुसार अमल होता है । वस्तुत अमेरिका में भी इनमे से कुछ बातें तो ऐसी हैं, जिन्होने अभी तक पूर्णता नही प्राप्त की है और अमेरिकी व्यवस्था की कोई अनिवार्य विशेषता प्रकट नही करतीं; और न ही ये सिद्धान्त अपने आप मे कोई पृथक चीज है। किसी दूसरे प्रेक्षक को कुछ अन्य बाते भी चलती दिखायी दे सकती हैं। ऐसे भी कुछ लोग होंगे, जो इस वर्गीकरण को अधिक अथवा कम श्रेणियो मे पुन सयोजित कर सकते है । लेकिन, इस पुस्तक का जो उद्देश्य है उसके अनुरूप, जो कुछ अभी तक कहा गया है, वह सयुक्त राज्य अमेरिका मे विकसित लोकतत्री उद्योगवाद की सामान्य रूपरेखा का दिग्दर्शन कराता है । आगे के अध्यायो में हम इस रूपरेखा का अधिक विस्तार से अध्ययन करेंगे ।

द्वितीय भाग

३

मुनाफा क्या है ?

लोग अक्सर सुनते हैं कि "मुट्ठी भर धन्ना सेठो द्वारा नियंत्रित अमेरिकी एकाधिकारवादी उद्योग बहुत अधिक लाभ कमाते है और मजदूरों से उनके परिश्रम का फल छीन लेते हैं।" यह आरोप प्रचारात्मक हो या नही, लेकिन इसकी बारीकी से जाच करना आवश्यक है।

बड़े मुनाफे का अर्थ शोषण है ?

किसी भी अर्थ व्यवस्था में उत्पादन का एक ही प्रमुख उद्देश्य होता है—उपभोक्ता की जरूरत को पूरा करना। अब, इस सिद्धान्त की सार्थकता तभी सिद्ध होगी, जब हम एक प्रश्न का उत्तर देगे—उपभोक्ता कौन है ?

एक छोटे पैमाने की पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था में, जो अपेक्षाकृत थोड़ उपभोक्ताओ की जरूरत को पूरा करती है, उत्पादक बहुत ज्यादा दाम ले सकता है, जो उनके चुने हुए उपभोक्ताओ की जेब के अनुकूल हो सकता है। उत्पादक अपने मजदूरो को पारिश्रमिक बहुत थोडा दे सकता है, और प्रति इकाई ज्यादा से ज्यादा मुनाफा उठा सकता है। यह पुराने पूंजीवाद का निकृष्ट रूप है। इस प्रकार की अर्थ-व्यवस्था में मजदूरो का शोषण एक वास्तविक सम्भावना है।

पुराने प्रकार का पूंजीपति अपने मजदूरो का शोषण कर सकता था, क्योकि उसे पता होता था कि कौन मजदूर है और कौन ग्राहक। एक ही व्यक्ति मजदूर और ग्राहक दोनों हो इसकी सम्भावना बहुत कम थी। मजदूर अपने द्वारा निर्मित वस्तु खरीदने में समर्थ नही है, इसका मालिक की आय पर प्रभाव नही के बराबर था। वह अपने लाभ के लिए

ग्राहको से ऊँचे दाम लेता और जो लोग माल बनाते उन्हे बमुश्किल गुजर भर के लिए मजदूरी दे देता।

स्वतन्त्र और व्यापक उत्पादन वाली अर्थ-व्यवस्था मे यह बात आर्थिक दृष्टि से असम्भव है। क्यो ? क्योकि, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, इस प्रकार की अर्थ-व्यवस्था मे मजदूर और उपभोक्ता का भेद मिट जाता है। यहाँ मजदूर से मतलब सिर्फ शारीरिक श्रम करने वालो से ही नही है। आर्थिक उद्देश्य से किया गया हर मानव का प्रयास 'श्रम' है। अत्यन्त कुशल कार्यकर्त्ता, कारीगर, सचालक, व्यवसायी, वैज्ञानिक, कार्यालय कर्मचारी, अपनी जीविका के लिए खटने वाले हर व्यक्ति को राष्ट्र के श्रमिक समूह का सदस्य मानना चाहिए। अधिकतर वयस्क अमेरिकी, जिनकी सख्या साढे छ करोड से अधिक है, अपनी जीविका के लिए श्रम करते है। ये ही अमेरिकी अपने परिवारो के साथ उपभोक्ता समूह का रूप धारण करते है। इस प्रकार, अमेरिका में उपभोक्ताओ की संख्या आज बहुत बडी है। फलत अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था मे मजदूर उपभोक्ता अपने आप में एक वास्तविकता बन गया है। उत्पादक अपने मजदूर को इसलिए नही लूट सकता, क्योकि वह मजदूर उसका ग्राहक भी है। अगर श्रमजीवी लोगो में उद्योगों द्वारा उत्पादित माल और सेवाएँ खरीदने की आर्थिक सामर्थ्य न रही, तो इसका पहला धक्का उद्योगों को ही लगेगा, उनके माल का कोई खरीदार न रहेगा।

बहुत से लोगो मे यह धारणा पाई जाती है कि सब मिला कर देखा जाय तो मुनाफा निश्चित रूप से मजदूरो अथवा उपभोक्ताओ का शोषण ही है, क्योकि सब मिलाकर मुनाफे की राशि बड़ी दिखाई देती है, इसलिए मजदूरी जरूर कम होगी अथवा चीजो के दाम जरूरत से ज्यादा ऊँचे होगे। यह वह भ्रान्ति है, जिसके कारण अमेरिकी व्यवस्था के सम्बन्ध मे अधिकतर गलतफहमियाँ चल रही है। निकट से अध्ययन करने पर यह साफ हो जाता है कि ऐसा कोई निश्चित कोष नही है, जिससे मजदूरी और मुनाफा निकलते हों। सुव्यवस्थित और सुदक्ष उद्योग

एक साथ अच्छी मजदूरी भी दे सकता है, चीजो की कीमते भी नीचे रख सकता है और कुल मिलाकर देखा जाये तो भारी लाभ भी कमा सकता है।

यही बात सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था पर लागू होती है। अमेरिकी उद्योग का मुनाफा अमेरिकी जनता के जीवन स्तर के विकास के अनुपात से बढ़ा है। लाभ कई गुना बढा, परन्तु, लोगो की वैयक्तिक आय भी मूल्यो की अपेक्षा अधिक तेज गति में बढी। इसके साथ-साथ कुल मुनाफे का जहाँ विस्तार हुआ, वही प्रति इकाई लाभ मे गिरावट आ गई। यह सब व्यापक उपभोक्ता बाजार के विकास की विशेषता और परिणाम था।

मुनाफा पूँजी के स्रोत के रूप में

बढती हुई आबादी की आवश्यकता को पूरा करने और सामान्य जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए माल और सेवाओ का उत्पादन निरन्तर बढाते रहना आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के दो व्यावहारिक उपाय हैं। प्रथम तो यह कि, अर्थ-व्यवस्था की उत्पादनशील सुविधाओं को बढाया जाये, और, दूसरे, अच्छी मशीनो तथा उत्पादन के सुधरे हुए तरीको का प्रयोग कर प्रत्येक मजदूर की उत्पादन-क्षमता का विस्तार किया जाये। यदि उत्पादनशील सुविधाओ के विस्तार के साथ मजदूरो की उत्पादन क्षमता भी बढ जाये, तो सबसे उत्तम परिणाम की आशा की जा सकती है। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का विशाल उत्पादन और अमेरिकी जनता का उन्नत जीवन-स्तर वैयक्तिक उत्पादन मे वृद्धि के साथ उत्पादन-क्षमता के विस्तार को मिलाने के लिए निरन्तर चल रहे प्रयास का ही परिणाम है।

हम सब जानते हैं कि, किसी निजी प्रतिष्ठान का विस्तार अतिरिक्त पूंजी नियोजन पर ही निर्भर करता है। यही बात देश की सम्पूर्ण अर्थ-व्यवस्था पर भी लागू होती है। पूंजी वस्तुत. भौतिक प्रगति की नीव है।

मूलत., जो कुछ माल तैयार होता है, यदि उसका एक अंश बच रहे, तो वही पूंजी बन जाता है। औद्योगिक एकाधिकार वाली अर्थ-व्यवस्था

में खपत पर रोक राजनीतिक सत्ताधिकारियो के एक निश्चय मात्र से लग सकती है, लेकिन एक स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था मे अधिकाशत व्यक्तियो के स्वैच्छिक प्रयास से ही खपत को सीमित किया जाता है।

निजी उद्योग वाली आधुनिक अर्थ-व्यवस्था में पूंजी के वस्तुत· तीन प्रमुख स्रोत होते हैं, वैयक्तिक बचत, व्यापारिक बैंकों द्वारा उधार की व्यवस्था और मुनाफा।

१९५५ में, अमेरिकी व्यापारी वर्ग ने नवीकरण और विस्तार पर सब मिलाकर २८ अरब डालर खर्च किया। १९५६ में नये सयन्त्र (प्लाट) लगाने और उत्पादन सुविधाओं के विस्तार पर खर्च ३५ अरब डालर तक पहुँच गया, नये कार्यालय भवनो, फर्नीचर, कर्मचारियो के लिए मनोरजन सुविधाओ, आदि के विस्तार पर ९ अरब डालर खर्च हुआ सो अलग।

यदि मुनाफा न हो तो कारखानो के विस्तार के लिए रुपया उधार लेना पडे अथवा अधिक निजी पूंजी लगानी पड़े। लेकिन, यदि उद्योगों से भविष्य में कोई मुनाफा न हुआ तो वह ऋण पटाने में असमर्थ रहेगा और यदि लाभांश के रूप में उचित लाभ की आशा न रहे, तो नई पूंजी मिलना मुश्किल हो जायेगा। निजी उद्योगो के विस्तार के लिए पूंजी आकर्षित करने में मुनाफा, अर्थात् मुनाफे की आशा का अप्रत्यक्ष रूप से बहुत बड़ा योग रहता है।

तथापि, मुनाफे का एक प्रत्यक्ष पूंजीमूलक कार्य भी है। मुनाफा विकास-कोष का प्रमुख स्रोत होता है। वास्तव में कम्पनियो में फिर से नियोजित मुनाफा अमेरिका के आर्थिक विस्तार का सबसे अधिक विश्वसनीय तत्व रहा है। आंकड़ों को देखने से पता चलता है कि, १९४७ से १९५५ तक की अवधि मे मुनाफा अमेरिकी उद्योगों के विकास की रीढ़ था। नई मशीनो, संयन्त्र निर्माण और अनुसंधान पर उस काल में जो कुछ खर्च हुआ, उसका आधे से अधिक भाग कार्पोरेशनों में पुनः नियोजित मुनाफा ही था।

मुनाफे के अन्य कार्य

आज के अमेरिकी व्यापारी की दिलचस्पी बड़ी बिक्री से होनेवाले बड़े मुनाफे में होती है। वह प्रति इकाई अधिक लाभ के चक्कर में नही रहता। इसके विपरीत वह इस बात को अधिक पसन्द करेगा कि, आर्थिक स्थायित्व के वातावरण में कारोबार की लम्बी अवधि में कम ही मुनाफे पर सही अधिक परिमाण मे बिक्री हो। यह कोई परोपकार की बात नही। यह एक आर्थिक आवश्यकता है। प्रतियोगितामूलक व्यापक उत्पादन वाली अर्थ-व्यवस्था में सापेक्ष स्थायित्व को बनाये रखने के लिए व्यापारी वर्ग मजदूरी घटाकर या मूल्य बढाकर—जैसा कि, पुराने प्रकार के पूंजीपति कर सकते थे और कुछ देशो में ऐसा अब भी करते हैं—अपना मुनाफा बढा नही सकता।

यह ठीक है कि कोई कोई उद्योगपति अथवा किसी कम्पनी का प्रबन्ध वर्ग आर्थिक तथ्यो की उपेक्षा कर दे। लेकिन, अगर उसने मूल्य बहुत अधिक चढाकर ज्यादा मुनाफा उठाने की कोशिश की तो बहुत सम्भव है कि ऊँचे मूल्यो के कारण बाजार में उसके माल की पूछ ही न रहे और उसका कारोबार चौपट हो जाये। दूसरे, मजदूर यूनियनें, जो हमेशा राष्ट्रीय उत्पादन का बडे-से-बडा हिस्सा अपने सदस्यों को दिलाने के लिए प्रयत्नशील रहती है अधिक लाभ कमाने के लिए मजदूरी घटाने की किसी भी कोशिश का निश्चित रूप से प्रतिरोध करेगी।

पूंजी के महत्त्वपूर्ण स्रोत के रूप में मुनाफे को विकसित करने में कार्पोरेशन व्यवस्था ने बहुत अधिक काम किया है। कार्पोरेशन के मैनेजर का मुख्य कर्तव्य यह देखना होता है कि उसकी कार्पोरेशन दीर्घ-काल तक विकास के मार्ग पर चलती रहे। उसकी मनोवृत्ति शुद्ध लाभ का अधिकाश, आवश्यकतानुसार उद्योग के विस्तार पर लगाने की ओर रहती है, हालांकि बहुत से भागीदार, कार्पोरेशन के वास्तविक स्वामी अधिक से अधिक लाभाश प्राप्त करने के पक्ष में हो सकते हैं। शुद्ध लाभ का एक बडा भाग नियोजन के लिए रखकर धन को खपत से हटाकर

पूंजी की ओर ले जाने की प्रक्रिया का कार्पोरेशन एक अन्य महत्त्वपूर्ण तत्व बन गयी है।

मुनाफा और घाटे के माप का एक दूसरा कार्य भी है। इससे इस बात का भी पता चलता है कि किसी निजी उद्योग का प्रबन्ध कितना अच्छा है, और उसका सचालन कितने कुशल ढंग से हो रहा है। मुनाफे के तत्व के कारण ही व्यवस्था विभाग में बहुत योग्य व्यक्ति लिए जाते हैं। इसके साथ-साथ इससे यह पता भी चलता है कि उत्पादक तत्वो प्राकृतिक साधन, श्रम और पूंजी का ठीक तरह से उपयोग हो रहा है या नही। यदि किसी कम्पनी को कोई मुनाफा नही हुआ है, तो उसे अपने ढाचे और नीतियो पर फिर से विचार करना पडेगा। यह पता लगाना पडेगा कि वह अपना माल खर्चे से भी कम मूल्य पर तो नही बेच रहा, अथवा मूल्य इतने ऊँचे तो नही हैं कि खरीदार आगे नही बढ़ रहा, कही उसका उत्पादन और वितरण का तरीका तो खराब नही। मुनाफा और हानि का सिद्धान्त वह सुरक्षा कुंजी है, जो निजी उद्योग को कुशल सचालन के लिए प्रेरित करती रहती है और आर्थिक प्रगति की गारण्टी का काम करती है। इसके बिना खर्चा बढने और अपव्यय के कारण सम्पूर्ण समाज को हानि उठानी पड सकती है।

न ही पूंजी लगाने की प्रेरणा और नया कारोबार शुरू करने में अथवा नवीकरण पर धन लगाने में जो जोखिम रहता है उसकी क्षति पूर्ति के रूप में मुनाफे का महत्त्व खत्म हुआ है। लाभाश अथवा ब्याज की आशा लोगो को इसके लिए प्रेरित करती है कि वे अपनी बचत को उपभोग्य सामग्रियों पर ही खर्च न कर उसे स्वेच्छा से राष्ट्र के उत्पादनशील उद्योगो में लगायें।

पूंजी लगानेवालों को आखिर कितना बड़ा पुरस्कार मिलता है? यह सामान्यतः इस बात पर निर्भर होता है कि पूंजी नियोजक ने कितना जोखिम उठाया है। यदि कोई व्यक्ति ऐसे वित्तीय उद्योग में पैसा लगाता है, जिसका भविष्य निश्चित नहीं है. तो बहुत बड़ा लाभ उठा सकता है,

लेकिन इसके साथ उसकी पूंजी के डूब जाने का भी खतरा रहता है। तथापि, पूंजी लगानेवाला अपनी पूंजी पर ३ से ८ प्रतिशत का लाभ प्राप्त कर सकता है—लाभ परिमाण इस बात पर निर्भर होगा कि पूंजी किस प्रकार के उद्योग में लगायी गई है, उसमें जोखिम कितना है।

इस स्थल पर हम एक पूंजी नियोजक की औसत आय और ५,००० डालर वार्षिक कमाने वाले कुशल मजदूर की औसत मजदूरी की तुलना करेंगे। एक पूंजी नियोजक को साल में, ५,००० डालर कमाने के लिए १,००,००० डालर से भी अधिक 'पूंजी' लगानी पडेगी। लेकिन, यदि उसने अपनी बचत को शेयर आदि में लगा दिया है, तो यह निश्चित नही कि उसे साल में ५,००० डालर की प्राप्ति हो ही जायेगी। उल्टे ऐसा भी हो सकता है कि साल भर में उसे एक पाई भी न मिले। अमेरिका की आधी या एक तिहाई कार्पोरेशनें नियमित रूप से कोई लाभाश वितरित नही करती। अत यह तो साफ है कि औसत पूंजी लगानेवाले को इतना लाभ नही मिलता कि उसे अनुचित अथवा बहुत अधिक कहा जाये।

वस्तुत, देखा जाये तो अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत 'मजदूर' को ही सबसे अधिक तरजीह दी जाती है। लेकिन, आखिरकार साधारण उपभोक्ताओ में अधिक संख्या मजदूरो की ही तो है और इसके साथ लाखो मजदूर पूंजी नियोजक भी है। लगभग ६० लाख परिवारो के पास कार्पोरेशनों के शेयर और बांड है, जबकि इससे भी अधिक लोग बचत खातों, बीमा पालिसियों, आदि के जरिए अप्रत्यक्ष रूप से पूंजी लगाते रहते हैं। फिर भी, उनकी आय का अधिकांश उनकी मेहनत पर निर्भर है। फलत वे कितना उपभोग कर सकते हैं, इस बात का निर्धारण भी उनकी मेहनत पर ही होगा। यही कारण है कि एक व्यक्ति को 'मजदूर' के रूप में जितना पारिश्रमिक मिलता है, उतना उसे पूंजी नियोजक के रूप में नही मिलता। लोकतन्त्री उद्योगवाद के सिद्धान्तो पर आधारित व्यापक उत्पादन वाली अर्थ-व्यवस्था में मजदूर-उपभोक्ता का केन्द्रीय महत्त्व रहता है।

४

उत्पादन क्षमता, मजदूरी और मूल्य

अमेरिका के दिन-दिन बढते हुए जीवन-स्तर का एक मुख्य कारण उन्नत उत्पादन-क्षमता है। १६२६ मे ४५० लाख अमेरिकियो ने ११६ अरब घटे काम किया, जबकि १६५४ मे ६०० लाख अमेरिकियो ने १३० अरब घटे काम किया, अर्थात् १६ प्रतिशत अधिक। फिर भी, कुल उत्पादन १६२६ की तुलना मे दूना रहा। इस बढोतरी के पीछे यान्त्रिकी प्रगति का बडा हाथ है। और इस प्रगति का कारण है अमेरिका में ज्ञान, उपकरण और पद्धतियो के विकास के लिए चल रहा सतत प्रयत्न।

व्यापक उत्पादन क्या संस्कृति का शत्रु है ?

व्यापक उत्पादन का सिद्धान्त हमेशा लोकप्रिय नही होता। कुछ लोगो को भय है कि व्यापक उत्पादन 'सास्कृतिक बर्बरता' का जनक है। उनका तर्क हैं कि, पुराने कारीगरो की कारीगरी और कार्य की प्रतिष्ठा मशीनों की स्वचालित और समान गति के सागर मे डूब जायेगी। उनका दावा है कि व्यापक पैमाने पर उत्पादित वस्तुओं में वैयक्तिक कुशलता का अभाव होता है और जो लोग उनका व्यवहार करते हैं, उनमें भी वैयक्तिक अभिरुचि का ह्रास होने लगता है।

जैसा कि, अक्सर आम मान्यताओं में होता है, इन तर्कों में जहाँ सचाई का कुछ अश है, वही बहुत अधिक अतिश्योक्ति भी है। यह बात सच है कि अमेरिका में वैयक्तिक कारीगरो की संख्या बहुत कम हो गयी है, उनका स्थान कुशल मजदूरो और मिस्त्रियो ने ले लिया है। लेकिन, मजदूर अब मशीनों का गुलाम नही रहा, जैसा कि वह आरभिक उद्योगीकरण के दिनों में था। अब तो एक नया वैज्ञानिक आविष्कार हुआ है,

जिसे मानव अभियंत्रण (इंजीनियरिंग) कहते हैं। इसकी सहायता से अमेरिका में मशीन के साथ उसे चलानेवाले मनुष्यों की आवश्यकताओं का ताल-मेल बैठाने का सतत प्रयास किया जा रहा है। बेढंगे नियंत्रण (कंट्रोल) को समाप्त करने तथा ऐसे कामों के रुटीन में, जिनमें बहुत ज्यादा झुकने-झुकाने या ढुलाई की जरूरत पडती है, आवश्यक हेर-फेर संभव करने के लिए कारखानों में नये-नये डिजाइन की मशीनें बनायी जाती हैं। जहाँ तक उत्पादन की एकरूपता का प्रश्न है, अमेरिकी उद्योग उन वस्तुओं पर कुछ वैयक्तिक छाप डालते हैं, जहाँ वैयक्तिक रुचि का सबसे अधिक महत्त्व होता है। निश्चय ही, कोई अमेरिकी महिला यह शिकायत नहीं कर सकती कि स्त्रियों की पोशाकों में इतनी ज्यादा एकरूपता है कि उसे देखकर मन बैठने लगता है।

इन सब बातों के अलावा, ऐसा लगता है कि, व्यापक उत्पादन के आलोचक इसके परिणामों को आँखों से ओझल कर देते हैं। वे भूल जाते हैं कि प्राचीन काल की महान कृतियाँ, संग्रहालयों और राज प्रासादों में जिनकी हम प्रशंसा करते है, अतीत की सही तस्वीर प्रस्तुत नहीं करतीं। उन वस्तुओं को हम ऊँची संस्कृति की देन मानते हैं, लेकिन यह भी ध्यान देने की बात है कि उन्हें अपने पास रखने की सामर्थ्य मुट्ठी भर सम्पन्न व्यक्तियों मे ही थी। बेनवेनुतो सेलिनी द्वारा बनाया गया चाँदी का कटोरा, निस्सदेह एक महान कृति कहा जायेगा, लेकिन उसका निर्माण किसी राजा महाराजा के लिए ही किया गया था, 'जन-साधारण' के लिए नहीं। बहुत समय तक संस्कृति 'विलास सामग्री' बनी रही; वह इने-गिने सम्पन्न लोगों के लिए ही सुरक्षित थी।

व्यापक उत्पादन का युग आने से पूर्व लोगो में मतभेद जरूर था। एक रईस अथवा धनाढ्य व्यापारी एक ऐसी भिन्न दुनिया में रहता था, जो 'निम्नवर्गीय' लोगों से बिलकुल अलग थी। आज से सौ वर्ष पहले भी किसी दूसरे ग्रह से कोई यात्री यहाँ आता, तो उसे एक रईस और भटियारे को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होती, क्योंकि उनके हाव

भाव और पहनावे मे भारी अन्तर था ।

व्यापक उत्पादन ने अमेरिका में स्थिति बिलकुल बदल दी है । अधिक चीजें अधिकतर लोगो को उपलब्ध हो जाने के कारण सस्कृति का सामान्य स्तर ऊँचा हो गया है और विशेष रूप से स्पष्ट अन्तर बिलकुल मिट गये हैं । आप किसी रविवार को किसी अमेरिकी गिरजे मे जाइए । यदि आप यह सोचे कि लोगो के कपडे देखकर आप यह जान लेगे कि वहाँ कौन सम्पन्न व्यापारी है और कौन मजदूर, मेयर की पत्नी कौन है और दरबान की बेटी कौन, तो आप को बडी परेशानी होगी ।

अमेरिकियो का एक प्रमुख उद्देश्य यह है कि अधिक से अधिक लोगो को अधिक मे अधिक प्रकार की वस्तुएँ और सेवाएँ प्राप्त करने की सहूलियत हो । अमेरिकी उद्योग का निरन्तर यह प्रयास रहा है कि आज की 'विलास की वस्तुएँ' यथासभव अधिक से अधिक संख्या में 'व्यापक खपत की वस्तुओ' में परिणत हो जायें ।

फिर भी, इसका अभिप्राय यह नही कि अमेरिकियो को यह आशा है कि, 'विलास सामग्री' का अस्तित्व वे समाप्त कर देंगे । प्रगति के अनेक प्रमाण होते हैं । उनमे से एक यह है कि कितनी ही नयी नयी वस्तुओं का विकास होता रहता है । अनिवार्यत:, इस प्रकार की नयी चीजें आरम्भ में दुष्प्राप्य रहती हैं और यह स्थिति तब तक बनी रहती है, जब तक कि, उनके व्यापक उत्पादन के तरीके निकल नहीं आते और जब तक एक वस्तु का व्यापक उत्पादन शुरू होता है, तब तक और कोई नयी चीज बन कर सामने आ जाती है । और यही प्रक्रिया फिर शुरू हो जाती है । जब तक हम प्रगति की एक अधिकतम सीमा निश्चित नहीं कर देते और जब तक नयी वस्तुओं के उत्पादन पर रोक नही लगा देते, तब तक ऐसा समय नहीं आ सकेगा, जब कि 'विलास वस्तुओं' का अस्तित्व न हो । कुछ आश्वासनो के बावजूद वह दिन अभी दूर दीखता है, जब "हर व्यक्ति को हर चीज अपनी आवश्यकतानुसार मिल सकेगी" यदि इससे हमारा अभिप्राय यह हो कि प्रत्येक व्यक्ति को ,विलास

सामग्री' भी आवश्यकता भर मिलने वाली है।

इसके साथ-साथ यान्त्रिकी विद्या और बढ़ती हुई उत्पादन-क्षमता के फलस्वरूप किसी नई वस्तु के विकास और उसके व्यापक उत्पादन तथा वितरण के बीच का अन्तर कुछ कम हो सकता है। अमेरिका का स्वतन्त्र उद्योग उत्पादन के विभिन्न चरणो के बीच के समय का अन्तर निरन्तर घटाता रहा है।

अधिक मजदूरी और कम मूल्य

व्यापक उपभोक्ता बाजार को बनाये रखने के लिए मजदूरी और वेतन के साथ मूल्य का उपयुक्त सम्बन्ध कायम रखना आवश्यक है। क्ता स्वभावत. 'सस्ता मूल्य' चाहेगा। तभी वह अपने पैसे से क वस्तुएँ खरीद सकेगा। इसके विपरीत, उत्पादक स्वभावत अधिक और कम मजदूरी रखना चाहता है। इस प्रकार उसे प्रति इकाई क से अधिक लाभ की प्राप्ति हो सकेगी। प्राचीन पूंजीवादी व्यवस्था यही बुनियादी विचारधारा है। लेकिन, लोकतन्त्री उद्योगवाद और पक खपत के निकट सम्बन्ध को देखते हुए यह साफ है कि उत्पादक का दीर्घकालीन हित इस बात मे नही है कि प्रति इकाई अधिक से अधिक और जल्द से जल्द मुनाफा कमाये, बल्कि उसका वास्तविक हित इस बात मे है कि उसके लिए व्यापक उपभोक्ता बाजार हमेशा बना रहे। इस प्रकार का बाजार स्पष्टत ऐसी मजदूरी और मूल्य पर निर्भर करेगा, जिसके कारण अधिक से अधिक लोगो के लिए अधिक से अधिक प्रकार की वस्तुएँ खरीदना संभव हो। इस तरह 'अधिक मजदूरी और सस्ता मूल्य' न केवल उपभोक्ता के हित मे है, बल्कि इससे उत्पादक का भी हितसाधन होता है।

वस्तुत. 'अधिक मजदूरी और सस्ता मूल्य' से वास्तविक अर्थ का ठीक-ठीक बोध नही होता। वास्तविक महत्त्व इस बात का है कि मजदूरी और मूल्य का सम्बन्ध क्या है, इस बात का नही कि किसी खास समय मजदूरी और मूल्य का स्तर क्या था।

फिर भी पाठक प्रश्न कर सकते है कि, यदि 'मजदूर-उपभोक्ता' और 'उत्पादक' के हित इतने मिले-जुले है, तो फिर अमेरिका में मजदूरो के झगडे क्यो होते है ? मानवीय कमजोरियो की उपेक्षा नही की जा सकती, यह कमजोरी अक्सर ठोस आर्थिक चिन्तनधारा पर हावी हो जाती है। फिर भी एक प्रमुख प्रश्न, जैसे, उत्पादन क्षमता को लेकर चलनेवाले ईमानदारी पूर्ण मतभेद इस प्रकार के झगड़ो के कारण हो सकते है। यदि मजदूरी बढाने के साथ-साथ उत्पादन नही बढाया गया, तो इससे मुद्रास्फीति पैदा हो जायेगी। लेकिन, हर प्रकार के काम में उत्पादन को ठीक-ठीक मापा नही जा सकता। जब तक उत्पादन को अधिक सही-सही मापने के तरीके नही निकाले जाते, तब तक मालिक-मजदूर झगडे खडे होते रहेगे। तथापि, अमेरिका मे मालिक मजदूर झगडो में अब उतनी कटुता नही होती, जितनी पहले हुआ करती थी। अक्सर, ये विवाद सामूहिक सौदेबाजी द्वारा आमने सामने बैठकर ही हल कर लिये जाते हैं। अमेरिकी श्रम सूचना संगठन (ब्यूरो ऑफ लेबर स्टेटिस्टिक्स) द्वारा प्रस्तुत अनुमान के अनुसार १९४७ मे २५ नये मालिक मजदूर ठेको मे से २४ पर शातिपूर्ण समझौता हो गया। १९४७ और १९५२ के बीच हड़तालो के कारण काम के समय की बर्बादी पहले की तुलना मे १ प्रतिशत के आधे से कम रही। और १९५४ में हड़ताल के कारण समय की बर्बादी कुल काम के दिनो का केवल ०.२ प्रतिशत थी।

कभी-कभी वार्ता अर्से तक चलती रह जाती है और बहसें भी गर्म हो जाती है; लेकिन, कोई न कोई समझौतापूर्ण समाधान निकल ही आता है। उदाहरण के लिए उस समझौते को ही ले, जिसके अन्तर्गत मोटर वाहन (आटोमोबाइल) मजदूरो को वार्षिक मजदूरी की गारंटी दी गयी है अथवा उस समझौते को देख सकते है, जिसके अनुसार हाल में खान मजदूरो की दैनिक मजदूरी में २॥ डालर प्रतिदिन की वृद्धि की गयी है। (देखिए अध्याय १०)। मूल्य और मजदूरी में ताल बैठाने का बुनियादी तत्त्व उत्पादन-क्षमता ही होती है।

उत्पादन-क्षमता कैसे बढ़ती है ?

पिछले ५० वर्ष मे अमेरिकी उत्पादन प्रतिवर्ष औसतन २ प्रतिशत के हिसाब से निरन्तर बढता रहा है। लेकिन, उत्पादन न तो अपने आप बढता है और न ही इसके पीछे किसी प्रकृति का कोई करिश्मा है। इसके विपरीत अमेरिकी उद्योग और कृषि की उत्पादन-वृद्धि व्यावहारिक प्रोत्साहनो और कल्पनापूर्ण तरीको का परिणाम है।

अब मुनाफे के लक्ष्य को ही लीजिए। मुनाफा कमाने के लक्ष्य के कारण प्रतियोगितामूलक निजी उद्योगवाली अर्थ-व्यवस्था में उत्पादन बढ़ाना अनिवार्य हो जाता है। मुनाफा बढ़ाने का ठोस तरीका यही है कि प्रति इकाई उत्पादन व्यय घटाया जाये और उत्पादन बढाकर लाभ की मात्रा बढायी जाये, अर्थात् पूंजी और श्रम का उपयोग अधिक दक्षता के साथ किया जाये। और अमेरिकी उद्योग तथा कृषि ने बडे जोर के साथ यही किया है।

इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए अमेरिकी उद्योगो ने बडी हद तक वैज्ञानिक अनुसधानो का सहारा लिया है और उत्पादन बढाने के लिए यथासभव जल्द से जल्द एक से एक नये तरीके अपनाये हैं। अमेरिका के आर्थिक विकास के हाल के एक अध्ययन (अमेरिकाज नीड्स एण्ड रिसोर्सेज : ए न्यू सर्वे, जे० फ्रेडरिक ड्यूहर्स्ट और उनके साथियो द्वारा संपादित) के अनुसार १९५० में वस्तुओं और सेवाओं का शुद्ध उत्पादन १८५० की तुलना मे २५ गुना ज्यादा था, जबकि श्रम शक्ति में सिर्फ ८ प्रतिशत की वृद्धि हुई। १९५० में काम के कम घण्टों को बाद देने के पश्चात् अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था ने १८५० की तुलना में ५ गुने से भी कम वास्तविक मानव शक्ति लगाकर कुल उत्पादन उस वर्ष की अपेक्षा २५ गुना बढाने में सफलता प्राप्त कर ली। दूसरे शब्दों में अमेरिकी मजदूरो की उत्पादन-क्षमता पिछले सौ साल की अवधि में ५ गुनी बढ गई है। १८५० मे एक मजदूर प्रति सप्ताह ७० घण्टे काम करके ३

सप्ताह मे जितना पैदा कर सकता था, आज एक मजदूर एक ही सप्ताह में ४० घण्टे काम करके औसतन उतना ही उत्पादन कर सकता है। यदि उत्पादन-क्षमता मे वृद्धि की यह रफ्तार बनी रही, तो आज से सौ साल बाद अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था मे एक दिन मे ७ घण्टे काम करके उतना पैदा किया जा सकेगा, जितना आज एक सप्ताह मे ४० घण्टे काम करके पैदा किया जाता है।

प्रति मजदूर उत्पादन में इतनी बडी बढोतरी आखिर कैसे सम्भव हुई ? इतना तो निश्चित है कि यह शारीरिक बूते पर अधिक पैदा करने की औसत आदमी की सामर्थ्य का परिणाम नही है। उत्पादन कुछ हद तक ही मजदूरो की दक्षता का माप या परिणाम होता है। पिछली कई दशाब्दियो मे इतनी तेजी से जो उत्पादन-वृद्धि हुई है, उसमे व्यवस्था की सुचारुता, मजदूर की वैयक्तिक कुशलता अथवा किसान की लगन का स्थान दूसरा ही रहा है। बहुत उत्साही और कुशल मोची अत्यन्त सुयोग्य निरीक्षक की देख-रेख में सौ साल पुराने औजार से बहुत घण्टे काम करके भी उतना उत्पादन नही कर सकता, जितना आज का वह अर्द्ध-निपुण मजदूर कर सकता है, जो कम घण्टे ही खटता है, पर बिजली चालित मशीनो से काम लेता है। अमेरिकी उत्पादन में जो कल्पनातीत वृद्धि हुई है, उसका कारण यह नही है कि अमेरिका के लोग आजकल अधिक मेहनत से अथवा कुशलता से काम करते है, यह तो उत्तरोत्तर अच्छे तरीके और अधिक सख्या में अच्छी से अच्छी मशीने निकालने और उनका प्रयोग करने के लिए चल रहे सतत प्रयास का ही परिणाम है। अमेरिका ने निर्जीव शक्ति के जरिए मानव प्रयास की उत्पादन-क्षमता को कई गुना बढ़ा दिया है।

फिर भी उत्पादन की प्रक्रिया में व्यक्ति व्यक्ति की कुशलता, प्रयास और सहयोग का स्थान आज भी बना हुआ है। उनके अभाव से अच्छी मशीनों, कारखाने के सुनियोजित संगठन और प्रचुर शक्ति की क्षमता बिलकुल नष्ट नही होगी, तो कम से कम घट जरूर जायेगी। अमेरिकी

व्यापारी इस तथ्य को स्वीकार करते है और इसलिए वे उत्पादन मे मानवीय तत्व पर विशेष ध्यान देते हैं। व्यवस्था विभाग में नियुक्त मनोविज्ञानवेत्ताओ ने यह प्रमाणित कर दिया है कि उत्पादन बढ़ाने में मजदूरो की मनोदशा का बहुत महत्त्व है।

औद्योगिक मनोविज्ञान विज्ञान की एक नयी शाखा है, जिसका सम्बन्ध उत्पादन के मानवीय तत्व से है। इसका आरम्भ आज से कोई ३० वर्ष पहले प्राय अचानक ही हो गया। वेस्टर्न इलैक्ट्रिक कम्पनी यह जानना चाहती थी कि जिस विभाग मे टेलीफोन तैयार करने का काम लड़कियाँ करती है, यदि वहाँ रोशनी का अच्छा इन्तजाम कर दिया जाये, तो इसके फलस्वरूप उत्पादन किस हद तक बढेगा। यह देखकर सबको आश्चर्य हुआ कि रोशनी का परीक्षण शुरू होने मात्र से उत्पादन बढने लगा—रोशनी वस्तुत. बढी या घटी, इसका उससे कोई सम्बन्ध नही था। उत्पादन उस हालत मे भी बढा, जब परीक्षण करनेवालो ने बहाना तो यह बनाया कि वे ज्यादा रोशनी के बल्ब लगा रहे है, लेकिन वस्तुतः उन्होने पहले ही बल्ब फिर से लगा दिये।

वेस्टर्न इलैक्ट्रिक कम्पनी ने यह अनुभव किया कि यह कुछ विचित्र बात है। यह फर्म पाँच वर्ष तक इस उत्पादन-वृद्धि के वास्तविक कारण की छानबीन करती रही। अन्त में, अनुसधान करनेवालो के सामने यह स्पष्ट हो गया कि मजदूरो पर इस बात का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है कि, उन पर लोग कितना ध्यान देते हैं। परीक्षण से ही मजदूरो को लगा कि कम्पनी उनमें दिलचस्पी लेती है, उन्हे लगा कि हम भी कुछ हैं और वे अधिक मेहनत से काम करने लगे।

इसके बाद से अन्य कई मनोवैज्ञानिक आविष्कार हुए है। उदाहरणार्थ, अनुसंधान करनेवाले इस परिणाम पर पहुँचे है कि पुराने उद्योगपतियो का यह विश्वास बिलकुल गलत है कि यदि मजदूर १० या १२ घण्टे तक काम पर लगाये रखे जाये, तो ज्यादा काम निकलेगा। वे इस नतीजे पर पहुँचे है कि विश्राम से दक्षता बढ़ती है। फलतः

अमेरिकी व्यापार जगत मे हर जगह बीच-बीच में 'काफी ब्रेक' की व्यवस्था रहती है, जब मजदूर काम छोड़कर कुछ देर विश्राम और गपशप करते हैं।

उनकी खोजों का—अंशतः ही सही—एक परिणाम यह निकला है कि आधुनिक अमेरिकी कारखाना औद्योगिक स्थापत्य का अनुपम नमूना होता है। ये नये कारखाने अक्सर खुशनुमा ग्रामीण प्रदेश मे बनते है, इनकी तुलना कार्ल मार्क्स के 'पसीनो से लथपथ मजदूरो से भरे लदन के कारखाने से' नही की जा सकती। आज से कुछ समय पूर्व मैं 'इन्टर-नेशनल बिजनेस मशीन्स' के कारखाने के मजदूरो का क्लब देखने गया था। यह क्लब पोकीप्सी, न्यूयार्क मे है। इसमें एक रगशाला है, जिसका मच बहुत बड़ा और चारो तरफ घूमनेवाला है, उद्यान पथ है, टेनिस कोर्ट हैं, चाँदमारी दीर्घाएँ हैं, गोल्फ का मैदान है, पुस्तकालय है, तैरने का तालाब और लाउंज है।

२५,००० से भी अधिक कम्पनियो में कर्मचारियो के लिए मनोरजन कार्यक्रमो की व्यवस्था है। शिकागो के 'नेशनल इण्डस्ट्रियल रिक्रिएशनल एसोसिएशन' के अनुसार सिर्फ १९५६ में अमेरिकी उद्योग ने अपने कर्मचारियो के मनोरजन पर १ अरब डालर रकम खर्च की थी। आज अधिकतर अमेरिकी व्यापार प्रतिष्ठानो मे प्रशिक्षित औद्योगिक सम्पर्क कर्मचारी होते है। ये लोग कम्पनी और उसके कर्मचारियो में स्वस्थ सुन्दर सम्बन्ध बनाये रखने की कला के विशेषज्ञ होते हैं। इनके सामने एक ही प्रेरक सिद्धान्त होता है। और वह यह कि, अधिक उत्पादन के लिए मजदूरों की मनोदशा को उत्साहपूर्ण रखना अनिवार्य है।

उत्पादन बढ़ाने के लिए चल रहा यह सतत प्रयास उद्योग तक ही सीमित नही है। इसका प्रभाव कृषि पर भी पड़ा है। अमेरिकी किसान के पास अपनी जमीन होती है। उत्पादन बढ़ाने के लिए उसे अपने आपसे सबल प्रोत्साहन मिलता है। प्रति एकड़ अधिक पैदावार से उसके और उसके परिवार की आय बढ़ती है।

उद्योग के विकास और शहरी आबादी में बढ़ोतरी के साथ-साथ कृषि पदार्थों की माँग का भी विस्तार हुआ है। खेतिहर मजदूर खेत छोडकर शहरी औद्योगिक श्रम केन्द्रो की ओर भागते जा रहे हैं, तथापि कृषि पदार्थों की माँग पर इसका कोई खास प्रभाव नही पडा है। कृषि पदार्थों की बढती हुई माँग को पूरा करने का एक ही तरीका था और अब भी है और वह यह कि फार्मो पर प्रति मजदूर उत्पादन बढाया जाये।

मशीने, उर्वरक और कृमिनाशक रसायन देकर उद्योग तथा विज्ञान ने किसान की सहायता की है। निरन्तर बढ़ती हुई माँग ने किसान के लिए जो अवसर उपलब्ध किया है, उसका लाभ उठाने में उसने इस सहायता का पूरा-पूरा उपयोग किया है। उन्नत कृषि उत्पादन अधिकांशतः आर्थिक प्रोत्साहन और उन्नत तरीको तथा सुविधाओ के सम्मिलित प्रयोग का परिणाम है।

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के विस्तार के पीछे प्रोत्साहनों का प्रमुख हाथ रहा है। आदमी कितना काम करे और कितना पैदा करे इसका निर्णय लाभमूलक प्रोत्साहन ही करता है। वैयक्तिक प्रतिष्ठा, अच्छी कार्य-स्थिति, सुकार्य भावना तथा आर्थिक प्रोत्साहन, ये सब बातें अधिक उत्पादन लक्ष्य की पूर्ति के लिए अनिवार्य मानी जाती है। इसी ढाचे में 'वर्ग-संघर्ष' का मार्क्सवादी सिद्धान्त (अर्थात् पूँजीपतियो द्वारा वर्ग विशेष का शोषण बनाम मजदूरो द्वारा वर्ग विशेष के प्रति विद्रोह) का कोई स्थान नही है। वस्तुतः लोकतन्त्री उद्योगवाद से उस सिद्धान्त का कोई मेल नही है, क्योकि उससे उत्पादन को बाधा पहुँचती है।

उन्नत उत्पादन और वर्द्धमान जीवन स्तर

लेनिन ने एक बार लिखा था : 'जन-सामान्य का जीवन स्तर उठाने के लिए अतिरिक्त पूँजी का उपयोग नही किया जायेगा। क्योंकि इसका अर्थ होगा पूँजीपतियों के मुनाफे में कमी।' अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के तत्वों को समझ लेने पर लेनिन का यह वक्तव्य बिलकुल

असंगत लगता है। क्योकि उत्पादन वृद्धि के साथ-साथ जन-सामान्य का जीवन स्तर भी उन्नत होता रहा है। मजदूरी और मूल्यों का आनुपातिक सम्बन्ध देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवन स्तर मे कितना सुधार हुआ है। आज का अमेरिकी मजदूर अधिक और अच्छी वस्तुएँ खरीद सकता है और वह भी इतना कम काम करके जितना कम उसने इतिहास मे पहले कभी नही किया।

उत्पादन-वृद्धि के फलस्वरूप जितनी 'अतिरिक्त पूंजी' का निर्माण हुआ उसका उपयोग जन-सामान्य का जीवन स्तर उठाने के लिए निरन्तर किया जाता रहा है। और इसका भी कारण यही है कि व्यापक उत्पादन के लिए व्यापक खपत जरूरी है, और ये दोनो ही बाते व्यापक क्रय शक्ति पर निर्भर करती है।

आज के दो सबसे बडे औद्योगिक देशो मे उपयोग्य सामग्री खरीदने के लिए कितने समय तक काम करना जरूरी है इस पर विचार करने से व्यावहारिक परिणाम स्पष्ट हो जायेगे। औसत अमेरिकी मजदूर को एक जोडा जूता खरीदने के लिए ८ से १० घण्टे तक काम करना पड़ेगा, जबकि उसी क्वालिटी का एक जोडा जूता खरीदने के लिए औसत रूसी मजदूर को ७० से १०० घण्टे तक काम करना पडेगा। एक सूट खरीदने के लिए एक अमेरिकी को २५ से ३० घण्टे तक काम करना पड़ेगा, रूसी मजदूर उसके लिए १२० से १४० घण्टे तक खटेगा। अपनी एक घन्टे की मजदूरी से अमेरिकी मजदूर एक किलो से भी अधिक मांस खरीद सकता है, जब कि एक रूसी मजदूर को उसके लिए तीन से चार घण्टे तक काम करना पडेगा। २० दिन मे एक अमेरिकी इतना पैसा कमा लेगा कि एक आधुनिक रेफ्रीजरेटर अथवा बिजली का चूल्हा खरीद लें। लेकिन, इसी चीज को प्राप्त करने के लिए एक रूसी को कम-से-कम दो महीने खटना पड़ेगा।

अमेरिकियो ने उत्पादन का पुरस्कार न केवल भौतिक पदार्थों के रूप मे ही प्राप्त किया है, बल्कि विश्राम के समय और मनोरंजन के रूप में

भी उन्हे बढे हुए उत्पादन का पुरस्कार प्राप्त हुआ है । यह सब बढते हुए उत्पादन की देन है । १६०० के बाद से अब तक काम पर लगे अमेरिकियों की विश्राम की घडी लगभग दूनी हो गई है और ऐसा लगता है कि भविष्य में वह और बढेगी । १६१० के बाद से जो आंकडे सकलित किये गये है, उनके अनुसार अमेरिकियो ने कुल वृद्धि की दो-तिहाई तो माल और सेवाओ के रूप में ली है और शेष एक-तिहाई काम के घटे हुए घण्टे और बडे हुए मनोरंजन के रूप मे ।

विश्राम की घडी मे इसी वृद्धि के कारण लाखो करोडो डालर के कई नये उद्योगो की स्थापना सम्भव हुई है । ये नये उद्योग मनोरजन और सास्कृतिक कार्यो के लिए आवश्यक वस्तुएँ अथवा सेवाएँ उपलब्ध करते है । ये नये उद्योग अमेरिकियो के परिवर्तित एव परिवर्तनशील सामाजिक रीति रिवाजो के लिए आवश्यक उपादानो का निर्माण करते है ।

आज से पचास साल पूर्व किसी मजदूर का मछली का शिकार करने अथवा गोल्फ खेलने के लिए निकलना अपने आप मे एक दृश्य बन जाता था । आज यह इतनी साधारण बात है कि मछली का शिकार करना अथवा गोल्फ खेलने जाते हुए मजदूर की ओर कोई देखेगा तक भी नही । विश्राम का समय और वैयक्तिक आय बढने से जन-सामान्य के सास्कृतिक उन्नयन को भी सहायता मिली है । अमेरिका मे प्रचारात्मक कार्यों के लिए सस्कृति को आर्थिक सहायता नही दी जाती, फिर भी वहाँ आज लगभग २०० समस्वर वाद्यवृंद और २,००० नाटक मण्डलियाँ है, जब कि ५० करोड़ किताबें प्रति वर्ष बिक जाती है ।

आजकल अमेरिकी लोग प्रति सप्ताह ५ दिन आठ घण्टे काम करते हैं । वर्तमान प्रवृत्तियो को देखकर लगता है कि भविष्य मे काम का घण्टा और कम होगा और सवेतन छुट्टियाँ और बढेगी । स्वचालन प्रणाली की प्रगति के साथ सप्ताह मे काम के दिन और घट जायेंगे । बढे हुए उत्पादन और रोजगारी को संतुलित करने के लिए ऐसा करना जरूरी

होगा। उन्नत तरीकों और नये प्रकार की शक्ति का उपयोग होने से मजदूरों की उत्पादन-क्षमता बढेगी और उत्पादन पहले से अधिक होगा। इस उत्पादन-वृद्धि को देखते हुए मूल्यो और मजदूरी के स्तरों में इस प्रकार परिवर्तन करना पड़ेगा कि लोग कम घण्टे काम करके अधिक और अच्छा माल खरीद सकेंगे। यह कोई थोथी भविष्यवाणी नही, यह अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के अतीत और वर्तमान पर आधारित एक ठोस पूर्वाभास है ।

५

व्यापक उपभोक्ता बाजार

'पूँजीवाद' की प्राय. यह कहकर आलोचना की गई है कि वह एक ऐसी अर्थ-व्यवस्था है जिससे कुछ ही व्यक्तियो को लाभ होता है। यह विशेष महत्त्व की बात नही कि पुरानी पूँजीवादी व्यवस्था के विषय में यह आरोप सही रहा हो। विशेष महत्त्व की बात तो यह है कि 'अनेक का लाभ' ही अमेरिका के आज के 'जन-पूँजीवाद' का आधार है। उपभोग्य वस्तुओ का व्यापक उत्पादन बिना व्यापक उपभोक्ता बाजार के चल ही नही सकता।

व्यापक उपभोक्ता बाजार के लिए प्रारम्भिक बाते

केवल जनसख्या विशाल होने से ही व्यापक उपभोक्ता बाजार की गारंटी नही हो जाती। अगर ऐसा होता तो जिन देशो की जनसंख्या करोडो मे है, उनके लोगो का जीवन स्तर स्वयं ऊँचा हो जाता। लेकिन आर्थिक दृष्टि से लोगो की गिनती तभी माने रखती है जब वे आर्थिक प्रक्रिया में पूरी तरह योग देते हो। इसलिए व्यापक उपभोक्ता बाजार की कुजी विशाल जनसख्या नही है अपितु यह बात है कि कितने व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से उपभोक्ता बाजार में भाग लेने के योग्य है।

जो लोग केवल अपनी दैनिक आवश्यकताओं की गुजर भर कर पाते है, व्यापक उपभोक्ता बाजार की दृष्टि से प्रायः अस्तित्वहीन हैं। उनकी एक प्रकार से जमीन में गडे सोने से उपमा दी जा सकती है।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि (अध्याय ४) व्यापक उपभोक्ता बाजार का द्विविध विकास होना चाहिए, यह एक विशाल आर्थिक इकाई से दूसरी इकाई तक फैला हुआ होना चाहिए तथा सभी

प्रकार के व्यक्तियो द्वारा अधिकाश सख्या में इस आर्थिक प्रक्रिया मे उपभोक्ताओ के रूप मे भाग लिया जाना चाहिए। बाजार मे दोनो बाते, 'व्यापकता' तथा 'गहराई' होनी चाहिए। अनेक देशो मे पहली चीज होती है तो दूसरी नही, अर्थात् बाजार 'उथला' रहता है। इन देशो की जनसख्या चाहे कितनी ही क्यो न हो, उत्पादन तथा समृद्धि सीमित रहती आई हैं। उनके उपभोक्ता बाजारो मे 'गहराई' का अभाव होता है।

अमेरिका मे लगातार वर्षो तक दोनो ही बातो की प्राप्ति के लिए प्रयत्न किया गया। पहले 'व्यापकता' पर बल दिया गया और अब 'गहराई' पर दिया जा रहा है।

पहला उद्देश्य तो स्वतन्त्र रूप से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मे आनेवाली बाधाओ को दूर करके पूरा हो गया।

व्यापार में आनेवाली मानवीय बाधाओं को दूर करना

संघटन की धाराओ के अन्तर्गत अन्तर्राज्यीय व्यापार के विकास मे मूल १३ अमेरिकी राज्यो का जो असतोषजनक अनुभव हुआ, उसका उन व्यक्तियों के विचारो पर प्रभाव पडा जिन्होने १७८९ में सघीय संविधान बनाया। धारा १ अनुच्छेद १० में कहा गया ······ 'कोई भी राज्य बिना कांग्रेस की अनुमति के आयात या निर्यात पर चुगी या शुल्क नही लगा सकेगा।' इससे अमेरिकी सीमाओं के भीतर व्यापार स्वतन्त्र हो गया।

साथ-ही-साथ संविधान ने कांग्रेस को यह उत्तरदायित्व सौपा कि वह राज्यों के बीच तथा विदेशों से व्यापार को नियमित करे।

नए राष्ट्र के इन प्रारम्भिक वर्षों में अधिकतर व्यापार जल मार्ग एटलांटिक महासागर या नदियों द्वारा होता था। सड़के बहुत कम थी तथा अच्छी नहीं थी और स्थल मार्ग से माल भेजना मंहगा पड़ता था। इन कारणों से अन्तर्राज्यीय व्यापार के सम्बन्ध मे जो पहला विशद कानून बना उसमे समुद्री तथा नदी मार्गों से नौवहन पर प्रकाश डाला

गया था ।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में स्थानीय हस्तक्षेप से स्वतन्त्रता की स्थिति अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शुरू मे किए गए कुछ निर्णयो से और सुदृढ हो गई । १८२४ मे न्यायालय ने फैसला दिया कि 'सविधान स्वीकार करने मे अगर एक उद्देश्य अन्य सब बातो से ऊपर है तो वह राज्यो के बीच पारस्परिक व्यापार को समस्त वैयक्तिक तथा विशेष प्रतिबन्धो से मुक्त रखना है···।'

बाद के निर्णयो से यह सिद्ध हो गया कि सविधान ने अन्तर्राज्यीय व्यापार के सम्बन्ध मे कॉंग्रेस को जो अधिकार प्रदान किए थे, वे सविधान पास करने के समय ज्ञात अथवा प्रयोग मे आनेवाले तरीको तक ही सीमित नही थे, अपितु उन्होने देश की प्रगति का अनुसरण किया । १८६६ तक रेलो का विकास हो जाने के कारण कॉंग्रेस ने स्थल मार्ग से अन्तर्राज्यीय व्यापार के सम्बन्ध मे पहली बार सघीय कानून बनाए ।

स्वतन्त्र अन्तर्राज्यीय व्यापार के इन सिद्धान्तो के विरोधी भी थे । कुछ विषयो मे अन्तर्राज्यीय व्यापार के क्षेत्र मे राज्यीय कानून बनाने के लिए दबाव डाला गया । लेकिन समय-समय पर सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि राज्यो को ऐसा कानून बनाने का अधिकार नहीं है । इसने कहा कि यह 'निर्विवाद है तथा निश्चित सिद्धान्त हो चुका है कि अन्तर्राज्यीय व्यापार के विषय मे अधिकार विभाजित नही हो सकते और कॉंग्रेस द्वारा बनाए गए कानून ही सर्वोपरि है ।' न्यायालय अपने इस निर्णय पर सदैव दृढ रहा कि 'जहाँ तक व्यापारिक कानूनो का प्रश्न है वे सभी अमेरिकियो पर समान रूप से लागू है तथा इस दृष्टि से अमेरिकियो में कोई भेद नही ।'

परिवहन तथा संचार का योग

अकेले कानून से ही देश के एक छोर से दूसरे छोर तक बाजार की स्थापना नही की जा सकती । उत्पादनकर्त्ता के पास से माल बाजार में

आना चाहिए। बिना परिवहन के व्यापार बाजार नही हो सकता। ऐसा न होने पर उद्योगो अथवा कृषि का उत्पादन या तो बिकेगा ही नही या फिर वही आस-पास के उस क्षेत्र मे बिकेगा जहाँ उत्पादन होता है। परिवहन व्यवस्था के पर्याप्त विकास के बिना व्यापार पर प्रतिबन्धो को दूर करने के लिए अमेरिकी कानूनो का कोई अर्थ ही नही होता।

१८६५ के गृहयुद्ध की समाप्ति के बाद अमेरिकी परिवहन का सर्वाधिक विकास हुआ। अब बीसवी सदी के मध्य में प्रमुख रेलवे लाइनो की लम्बाई लगभग २,४०,००० मील है तथा और सभी प्रकार की लाइनो की लम्बाई लगभग ४,००,००० मील है। यह कुल लम्बाई पृथ्वी की परिधि से २५ गुना से अधिक है। इन लाइनो पर ४३ हजार इजन, बीस लाख माल डिब्बे तथा ४,४,००० यात्री डिब्बे और १२०,००० अन्य विशेष डिब्बे चलते हैं।

इसके अतिरिक्त अमेरिकी सडको पर ६० लाख ट्रक चलते हैं, ३०,००० अन्तर्राज्यीय तथा लम्बे सफरवाली बसे हैं, जो शहरो तथा ग्रामीण क्षेत्रों के बीच चलती हैं। गत वर्ष ५३० लाख मोटरो ने—इसमें ४४० लाख निजी थी—५०० अरब मील की यात्रा की।

परिवहन के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रारम्भिक साधन जल-मार्ग थे। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में उनका योग निरन्तर महत्त्वपूर्ण रहा है। घरेलू जलीय मार्गों में यातायान क्षमता का भारी विकास हो गया है। यह बाँधों आदि के निर्माण तथा विशेष प्रकार की डीजल इजनों से चलनेवाली नावो को उपयोग मे लाकर किया गया। जलीय मार्गों से जानेवाले सामान में अब भी कच्ची सामग्री, कृषि उत्पादन तथा इंधन का बड़ा भाग होता है, लेकिन अर्द्ध तैयार तथा तैयार माल, जैसे लोहा और इस्पात की चीजे, पैट्रोल, रसायन तथा मशीने भी नदियों, नहरो व झीलो के रास्ते अधिक मात्रा मे ले जाये जा रहे हैं।

विमान यातायात के आश्चर्यजनक विकास के महत्त्व पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। आज प्रतिवर्ष अमेरिका के भीतर ढाई करोड़

व्यक्ति विमानों द्वारा यात्रा करते हैं। इसी प्रकार टेलीफोन तथा तार व्यवस्था भी इतनी पर्याप्त है कि अपेक्षाकृत दूर बसे क्षेत्रो को भी अच्छी तरह ये सेवाएँ मिल जाती है। सम्प्रति सम्पूर्ण अमेरिका मे ५०० लाख से अधिक टेलीफोन प्रयोग में आ रहे है।

अगर हम अमेरिका का ऐसा मानचित्र देखें, जिसमें रेलवे लाइने, नहरें, नौवहन योग्य झीलें तथा नदियाँ, विमान मार्ग, सड़के तथा परिवहन के अन्य साधन दिखाए गए हो तो हमें वह परस्पर काटती लाइनो के भूल भुलैए का चित्र जान पडेगा। मानव शरीर की धमनियो की भाँति परिवहन तथा सचार के ये साधन भी देश के सुदूरस्थ क्षेत्रो तक अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की परिधि को फैलाये हुए है। वे क्षैतिज रूप से व्यापक बाजार को वास्तविकता का रूप देते है।

वैयक्तिक आय तथा उपभोक्ता बाजार

लेकिन अकेली 'व्यापकता' काफी नही है। एक व्यापक खपत बाजार में 'गहराई' अर्थात् खपत की अधिकतम मात्रा भी होनी चाहिए। इसकी प्राप्ति के लिए सरकार, व्यापारी तथा श्रमिको ने सयुक्त रूप से तथा अलग-अलग वैयक्तिक आयो के पुन.स्तरीकरण के लिए प्रयास किया है। प्राय सभी पार्टियाँ इस बात के प्रति सजग नही थी कि उनके प्रयासो का अन्तिम परिणाम व्यापक उपभोक्ता बाजार का विकास हो। उद्देश्य अलग-अलग थे। फिर भी इनके परिणामस्वरूप संयुक्त बाजार का विकास हुआ।

इस बाजार का मूल भाग मध्यम आय के परिवार हैं। आकडों के अध्ययन से पता चलता है कि यह आवश्यक नही कि वैयक्तिक आय में वृद्धि के साथ खपत में भी उसी अनुमान से वृद्धि हो। एक परिवार, जिसकी कुल आय १७०० डालर है, अपनी यह सारी राशि खर्च कर सकता है। दूसरी ओर एक परिवार है, जिसकी आय १५,००० डालर है अपनी आय में से ६ हजार डालर खर्च करके बाकी बचा लेता है। एक

परिवार की जिसकी आय बहुत अधिक है—मान लीजिए कर चुकाने के पश्चात् यह राशि ५० हजार डालर है—तो वह अपनी कुल आय का दो तिहाई भाग बचाकर नियोजन कार्य मे लगा सकता है। स्पष्टत: खपत मे बढती हुई आय के अनुपात से वृद्धि नही होती।

एक कम आयवाला परिवार अपनी सम्पूर्ण आय उपभोक्ता वस्तुओ पर खर्च कर सकता है, फिर भी उसका कुल व्यय अल्प ही होगा। दूसरी ओर अधिक आयवाला परिवार उपभोक्ता वस्तुओ पर अपनी आय का थोड़ा-सा ही भाग खर्च कर शेष बचा सकता है। इस प्रकार व्यापक खपत बाजार न तो अधिक दरिद्रो पर और न कुछ थोडे से धनियो पर निर्भर करता है। इसका स्वस्थ विकास बडी संख्या में ऐसे 'मध्यम आय' के परिवारो पर निर्भर करता है जिनकी आय उस स्तर के आस-पास हो जहाँ अर्थ-शास्त्रियो के कथनानुसार सतोषजनक 'व्यय की प्रवृति' हो।

वैयक्तिक आयों का पुनःस्तरीकरण

'मध्यम आय' के आधार का विकास कट्टर सिद्धान्तो या विचारपूर्वक आयोजना का परिणाम या लक्ष्य तक नही रहा है। फिर भी सरकार, व्यापारियों तथा श्रमिको ने अनेक प्रकार से इसके विकास मे योग दिया है। अनेक बार मानवीय कारणो से श्रमिको की दशा सुधारने के लिए कदम उठाए गए, लोकतन्त्री संस्थाओ ने पुरानी पूंजीवादी व्यवस्थाओ की असमानताओं को दूर करने का काम सम्भाला। जब ये कदम आर्थिक दृष्टि से मजबूत सिद्ध हुए तो ये नई व्यवस्था के अविभाज्य अंग बन गए।

अन्य परिवर्तन व्यावहारिक अनुभव तथा आर्थिक आवश्यकताओं के परिणामस्वरूप हुए। १९१४ में हैनरी फोर्ड ने अपने मोटर कारखाने के एक मजदूर की प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी ५ डालर तक बढा दी। उस समय उनका उद्देश्य अपने कारखाने मे आने के लिए अधिक दक्ष कारीगरो को आकर्षित करना था ताकि उत्पादन बढ़ाया जा सके, माल

को तैयार करने में होनेवाला व्यय कम किया जा सके और फिर उसे सस्ती कीमतो पर बेचा जा सके ताकि माल की बिक्री में वृद्धि हो। हैनरी फोर्ड ने अपने निर्णय की भारी उलझनो को शायद तब नही समझा हो, जिसे प्राय: व्यापक उत्पादन तथा खपत द्वारा समृद्धि की दिशा में नए दृष्टिकोण का प्रारम्भ कहा जाता है। फोर्ड को इन पेचीदगियो का ज्ञान हो या न हो लेकिन वह व्यवस्था के उन बुनियादी सिद्धान्तो से प्रेरित और बाध्य हुआ, जो उस समय ऐसी श्रम तथा मजदूरी सम्बन्धी नीति को अपनाने के लिए उभर आए थे, जिसका उद्देश्य अमेरिकी आर्थिक विचारधारा को व्यापक रूप से प्रभावित करना था।

जैसी आशा थी, फ़ोर्ड की मजदूरी सम्बन्धी नीति का दूसरे व्यापारियों ने उत्साह के साथ स्वागत नही किया। यह नीति उनकी पुरानी पूंजीवादी धारणाओं के विरुद्ध थी। व्यापार की नई प्रवृत्तियो को जन्म देकर फोर्ड ने अधिकाश मार्गदर्शको की भाँति उपहास तथा विरोध का सामना किया। फोर्ड के साथियो तथा प्रतियोगियो ने इन नई प्रवृत्तियो की शुरूआत पर बुरा माना। वे स्वयं को अपनी पुरानी स्थिति मे ही सुरक्षित समझते थे। कौन जानता था कि आगे क्या होनेवाला है?

लेकिन समय तेजी से बदल रहा था। आज के अमेरिकी उद्योगपति 'व्यापक उत्पादन तथा प्रति वस्तु पर कम मुनाफा' और 'अधिक मजदूरी तथा कम कीमत' के सिद्धान्तों को आधार के रूप में स्वीकार करते हैं। वे बडी सख्या में मध्यम आय के परिवारो के अस्तित्व की आवश्यकता को समझते हैं।

मध्यम आय के परिवारो की निरन्तर वृद्धि का बहुत कुछ कारण मजदूर यूनियनें हैं, जिन्होने वेतन वृद्धि तथा नौकरी की शर्तों में सुधार के लिए निरन्तर प्रयत्न किया। औद्योगिक विज्ञान की प्रगति से यूनियनो के प्रयासों को बल मिला। इससे यह महसूस किया जाने लगा कि फैक्ट्रियो में अधिक शिक्षित तथा अधिक दक्ष कारीगर रखे जाएँ। अदक्ष कर्मचारियो के लिए नौकरियाँ कम हो गई हैं, श्रमिकों में कारीगर बनने

की प्रवृत्ति हो गई है जिससे अधिक वेतन की प्राप्ति होने पर जीवन-यापन का स्तर बदलता है। अधिक आय तथा जीवन-यापन का स्तर उन्नत होने से वह मध्यम आयवाले परिवारो में आ जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से अब वह वे वस्तुएँ तथा सेवाएँ प्राप्त कर सकता है जो पहले उसकी पहुँच के बाहर थी।

आयो के पुन. स्तरीकरण में अमेरिकी सरकार ने भी मुख्यत. वित्तीय तथा कर सम्बन्धी नीतियो का प्रयोग कर महत्त्वपूर्ण योग दिया है। संघीय आय कर विशेष महत्त्व का है। करो की दरे उत्तरोत्तर बढती जाती हैं जिससे बहुत अधिक आयो मे भारी कटौती हो जाती है। इस प्रकार एक परिवार जिसकी आय ५००० डालर है, अगर ५३६ डालर या कुल का दस प्रतिशत अदा करता है तो १०,००० डालर की आयवाला परिवार २००० डालर या २० प्रतिशन राशि चुकाएगा। आय बढ़ने के साथ उसी के अनुरूप कर बढ जाते हैं। जिस परिवार की वार्षिक आय ९० हजार डालर है, उसे आधी से अधिक आय या ४६,००० डालर आय करके रूप में देने होगे।

स्तरों के समानीकरण में इस क्रमिक ऊर्ध्वमान कर प्रणाली का प्रभाव अत्यन्त रोचक है। दो सम्पन्न परिवारो का उदाहरण लीजिए। एक की वार्षिक आय १७ हजार डालर है तथा दूसरे की ४००,००० डालर। साधारण हिसाब से ही पता चलता है कि दूसरे परिवार की आय पहले से २५ गुनी है। लेकिन यह स्थिति करों की अदायगी से पूर्व की है। कर चुकाने के बाद पहले परिवार के पास १० हजार डालर बचते हैं तथा दूसरे के पास ६० हजार डालर। अब दूसरे परिवार की आय पहले परिवार की अपेक्षा केवल ६ गुनी रह जानी है।

संसार के समस्त भागों में लोगों ने अमेरिकी टेलीविज़न के लोकप्रिय प्रश्नोत्तरी कार्यक्रमो के बारे मे सुना है। अत्यन्त कठिन प्रश्नो का, जो ज्योतिष विद्या से लेकर शेक्सपीयर तक सम्बन्धित हो सकते है, सही उत्तर देकर अगर कोई प्रतियोगी ६४,००० डालर की राशि जीत लेता है तो

इसका यह अर्थ नही कि यह सारी राशि उनकी हो जाएगी। घरेलू राजस्व का विभाग उसकी इस राशि का लगभग आधा भाग आय कर के रूप में ले लेगा। ६४,००० डालर की राशि प्राप्त करने के लिए एक प्रतियोगी को लगभग ५००,००० डालर जीतने चाहिएँ।

प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता मे जीतनेवाले को यह क्रमिक कर प्रणाली कठोर भले ही लगे, इसका उद्देश्य पूंजीवालों को कोई दंड देना नहीं है। इसके विपरीत अमेरिकी कर कानूनो मे ऐसे अनेक प्रावधान हैं जिनका उद्देश्य धनिको की अधिक आय को अर्थ-व्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रो मे लगाना है। यह कार्य नियोजन पूंजी के प्रति नरम रुख अपनाने से सम्पन्न होता है।

कुल मिलाकर अमेरिकी कर प्रणाली निष्पक्ष है तथा आर्थिक दृष्टि से मजबूत है। आयो के अन्तर को दूर करके तथा मध्यम आयवाले परिवारों की स्थिति सदृढ करके इस प्रणाली ने व्यापक अमेरिकी उपभोक्ता बाजार के विकास मे बड़ा योग दिया है।

उपभोक्ता ऋण तथा अमेरिकी बाजार

उपभोक्ता ऋण की कई कारणों से आलोचना की गयी है, फिर भी व्यापक अमेरिकी खपत बाजार के विकास तथा उसे बनाए रखने मे इसने मुख्य भूमिका अदा की है। आओ हम देखे कि व्यवहार में उपभोक्ता ऋण किस प्रकार क्रियान्वित होता है।

उदाहरण के तौर पर एक युवा दम्पति है, जिनकी शादी को एक साल हुआ है और उनके बच्चा होनेवाला है। उनकी आय ५,००० डालर है। वह एक ऐसा मकान खरीदना चाहते हैं जो १५,००० डालर में बिक रहा है। उनकी आय तथा जीवन-यापन का तरीका ऐसा है कि वे साल में ८०० डालर या १,००० डालर तक बचा लेते हैं। इन परिस्थितियो में मकान खरीदने के लिए उन्हे १५ साल तक बचत करनी पड़ेगी। लेकिन तबतक उनका बच्चा बड़ा हो जाएगा और अपने माँ-

बाप से अलग रहने की तैयारी में होगा। उस युवा दम्पति को तब उस मकान की जरूरत नही रहेगी और इस प्रकार मकानो के बाजार मे एक खरीदार कम हो जाएगा।

ऐसे लाखो परिवार हैं, जिनके सामने ऐसी परिस्थितियाँ है। अगर मकान की सारी कीमत खरीद के समय ही चुकानी पडे तो मकानों की माँग तेजी से गिर जाएगी। ऐसी स्थिति में उपभोक्ता ऋण सहायक होता है। उक्त युवा दम्पति जिसकी आय ५,००० डालर सालाना है, १५,००० डालर की कीमत का मकान नही खरीद सकता। लेकिन २० साल मे यह परिवार १००,००० डालर कमाएगा। अत. उपभोक्ता ऋण लेकर वे मकान तो अभी खरीद लेगे जबकि वास्तव में उन्हे जरूरत है और थोड़ी थोडी करके उस मकान की कीमत चुकाने के साथ मकान का लाभ भी उठाते रहेंगे। 'अब खरीदो और बाद में चुकाओ' के सिद्धान्त ने अमेरिकी उपभोक्ताओ की आदतों को बहुत बदल दिया है। वे हर चीज उधार खरीद सकते हैं, चाहे वह कपड़ा हो, जूते हो, अगीठी हो या ट्रेक्टर। सैकड़ो हजारो स्त्रियाँ प्रतिदिन दुकानो पर जाती हैं और बड़ी मात्रा में उधार खाते में सामान खरीदती है। वे 'चार्ज खातों' का प्रयोग करती हैं, इसके अन्तर्गत ग्राहक को एक निश्चित अवधि तक माल की कीमत नही चुकानी पड़ती। इसमें ग्राहक को उस मूल्य से अधिक नही चुकाना पडता जो वह अन्यथा साधारण खरीद के समय चुकाता।

दूसरे प्रकार की उधारी खरीद में जो 'किश्त योजना' के नाम से मशहूर है, किश्तों की कुल राशि कुछ अधिक होती है। उसमें मूल्य के साथ साथ उधार माल देने पर भी कुछ शुल्क लिया जाता है। अगर श्रीमती जोन्स कपडे धोने की एक नई मशीन खरीदना चाहती है, जिसकी कीमत १९९ डालर है, तो वह उसे 'आसान किश्तो' पर मूल्य अदायगी के आधार पर खरीद सकती है। वे पाँच डालर शुरू में देकर शेष राशि १२ महीनो में १७'५० डालर की किश्त के हिसाब से चुका सकती है। लेकिन यह कुल राशि १९९ डालर नही बैठेगी, बलिक २१५ डालर हो

जाएगी। यह १६ डालर की अतिरिक्त राशि उधार देने का एक प्रकार का शुल्क होगा। यह राशि अधिक देने के बावजूद श्रीमती जोन्स ने नगद मूल्य देने की बजाय किश्तो में खरीदना पसन्द किया। क्योंकि यह सन्देह-जनक था कि श्रीमती जोन्स सारा मूल्य एक साथ चुका पाती। 'किश्त योजना' ने अनेक अमेरिकियो के लिए यह सम्भव बना दिया है कि वे अपनी इच्छित वस्तुओ को जरूरत के समय प्राप्त कर सकें।

एक अमेरिकी महिला 'अतिरिक्त शुल्क' का यह भार एक और कारण से बरदाश्त पसन्द कर सकती है। अगर उसके पास १९९ डालर हैं और वह कपडे धोने की नयी मशीन लेना चाहती हैं तथा उसे इसका मूल्य नकद चुकाना पडता है तो अन्ततः उसके पास एक कपड़े धोने की मशीन ही आ पायेगी। लेकिन अगर वह अपने धन को 'छोटी अदायगियो' मे बाँट देती है तो वह कई चीजे खरीद सकती है और उन सबकी कीमत बाद में थोडी-थोड़ी राशि की मासिक किश्तो के रूप में चुका सकती है।

इस प्रकार वह अपनी आवश्यकता और इच्छा की अनेक वस्तुओं का लाभ एक साथ उठा सकती है। शायद अमेरिकी पति यह पसन्द करेंगे कि उनकी 'पत्नियो' मे खरीदारी के लिए इतना दुर्निवार आकर्षण न हो। लेकिन किश्त योजना के विषय मे पतियो की भी ऊँची धारणा है। वे एक नई कार खरीदने के लिए इसे एक उपाय समझते हैं। इसमे सन्देह नहीं कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में उपभोक्ता ऋण एक महत्त्वपूर्ण चीज है।

उपभोक्ता ऋण की आलोचनाओ में सभी पूर्णतः निराधार नहीं हैं। यह कहा जाता है कि उपभोक्ता आवश्यक पैसा बचाकर नकद मूल्य चुका कर सामान खरीद सकते है। इस प्रकार अतिरिक्त शुल्क की राशि नही देनी पड़ेगी। फिर भी मानव का यह स्वभाव है कि वह ऋण चुकाने के लिए धन बचा सकता है बजाय इसके कि बाद मे सामान खरीदने के लिए धन अलग से इकट्ठा करे।

कुछ आलोचको का कहना है कि उपभोक्ता-ऋण अर्थ-व्यवस्था में मुद्रास्फीति की स्थिति पैदा करता है। यह आरोप सर्वथा असत्य तो नहीं,

लेकिन इससे यह कठोर परिणाम नही निकलना चाहिए कि ऋण पूरी तरह हानिकर है और इसलिए उस पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। व्यवहार में अमेरिकी उपभोक्ताओ ने ऋण करने मे कोई ज्यादती नही की है। उन्होने अपनी कुल सम्पत्ति से कही कम कीमत का उधार सामान खरीदा है। १९५४ में अमेरिकियो पर मकान-रेहन-ऋण ७५ अरब डालर था, स्थायी खरीदो, 'चार्ज-खातो,' तथा वैयक्तिक ऋणो की राशि ३० अरब डालर थी तथा 'वित्तीय ऋण' अर्थात् बैंको व फर्मो से लिए गए ऋणो की राशि १० अरब डालर थी। कुल मिलाकर उपभोक्ता ऋण लगभग ११५ अरब डालर था।

यह एक बहुत बडी राशि है। लेकिन अमेरिकी उपभोक्ताओ को दूसरी ओर ३८० अरब डालर वसूल भी करने थे। बडे-बडे व्यापारियो तथा सरकार पर उतना ऋण था। उपभोक्ताओ का काफी धन वित्तीय सस्थाओ के पास भी बीमा पालिसियो तथा बैंक निवेशों के रूप मे था। कुल मिलाकर अमेरिकियो ने अपनी कुल आय से कम खर्च किया।

× × ×

विशेष आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था मे अनेक प्रोत्साहन तथा तरीके विकसित हो गए है। सघीय सरकार ने व्यापारिक, सामाजिक तथा वित्तीय कानूनो द्वारा व्यापारियो के उत्पादन बढाकर, उपभोक्ता ऋण तथा श्रमिको के लिए लाभदायक करारो द्वारा और मजदूर यूनियनो ने मजदूरी की माँग द्वारा एक व्यापक उपभोक्ता बाजार के विकास मे मिलकर सहायता की है।

अधिकांश मध्यम आयवाले परिवारो के सुदृढ़ आधार पर स्थित अमेरिकी उपभोक्ता-बाजार ने उल्लेखनीय 'व्यापकता' तथा 'गहराई' प्राप्त की है। बिना किसी प्रकार की कृत्रिम बाधा के यह एक तट से दूसरे तट तक व्याप्त है और सभी प्रकार के उपभोक्ता इस आर्थिक प्रक्रिया में भाग लेते है। यह व्यापक उपभोक्ता बाजार इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि सभी के लिए आर्थिक सम्पन्नता एक स्वतन्त्र समाज में ही सर्वोत्तम रूप से प्राप्त की जा सकती है। यह 'सर्वहारा श्रमिको' के पूँजीवादी शोषण के प्रचार के नारे का जबरदस्त उत्तर है।

६

प्रतियोगिता अथवा एकाधिकार

मार्क्स सिद्धान्त की एक प्रमुख बात यह है कि पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत धन अन्ततः कुछ बडे-बडे उद्योगो के हाथ में इकट्ठा हो जाता है और इनके मालिक फिर खुलकर सर्वहारा श्रमजीवियों का शोषण करते हैं। धन और शक्ति बड़े एकाधिकारवाले उद्योगो के हाथ मे आ जाने से परिश्रम का लाभ तो कुछ बड़े आदमी भोगते हैं और मजदूरों के लिए केवल गुजारे भर के लिए ही कुछ बच रहता है। यह दलील प्राय सुनने में आती है कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था ऐसे ही एकाधिकारवाले उद्योगो एवं व्यक्तियो के हाथ में है और वास्तव में वे ही राष्ट्र के आर्थिक एव सामाजिक जीवन का नियंत्रण करते है। लेकिन इसके विरुद्ध यह सिद्ध करने के लिए हमारे पास प्रमाण है कि 'व्यापक उत्पादन, व्य पक खपत तथा व्यापक क्रय शक्ति' पर आधारित व्यवस्था में अन्धाधुन्ध शोषण आर्थिक दृष्टि मे असभव है। अमेरिकियों का दावा है कि उनकी अर्थ-व्यवस्था प्रतियोगिता पर आधारित है। इस महत्त्वपूर्ण विषय पर बारीकी से विचार की आवश्यकता है।

एकाधिकार अथवा मूल्य प्रतियोगिता

यह याद दिलाना लाभदायक होगा कि 'एकाधिकार' का अर्थ है प्रतियोगिता का पूर्णत. अभाव। एकाधिकारवादी अर्थ-व्यवस्था में उपभोक्ता के सामने सिवाय इसके और कोई चारा नही होता कि वह इन एकाधिकारवाले उद्योगों द्वारा तैयार माल को ही खरीदे। क्योकि माल की सप्लाई करनेवाला और होता ही नही। एकाधिकार का यही सार है। व्यावहारिक दृष्टि से एकाधिकारवाले उद्योग ग्राहक को बन्दी सा

बना कर रखते है ।

इस प्रकार बन्दी किये गये उपभोक्ताओ के साथ कारोबार मे ये एकाधिकारी उद्योग मनमाने ढग मे अपने माल की किस्म और कीमत निश्चित कर सकते है । इस प्रकार के उद्योग यह भी कर सकते हैं कि उत्पादन सीमित कर दें, मुनाफे की मात्रा बढा दे, खरीदने में विभेदात्मक नीति अपनाये तथा मजदूरो को कम वेतन दे, क्योकि इन मजदूरो को कही दूसरी जगह काम करने का अवसर नही है । निरंकुश एकाधिकारी उद्योग इस प्रकार आर्थिक जगत मे अत्याचारी एव जनता के शोषक बन सकते है । क्या इस प्रकार के पूर्ण एकाधिकारी उद्योग अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में विद्यमान है ? इस प्रश्न का उत्तर है 'बिलकुल नही ।' वहाँ इस प्रकार के उद्योग हो ही नही सकते, क्योकि, अगर और कोई कारण न भी हो, तो पूर्ण निरकुश एकाधिकारी उद्योग, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन एव खपत में कृत्रिम कमी होती है, स्वतत्र व्यापक उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्था से मेल नही खाते ।

यह आवश्यक नही कि 'एकाधिकार' व्यवस्था हानिकारक ही हो । कुछ विशेप स्थितियो में मितव्ययिता की दृष्टि से यह वाछनीय भी हो सकती है । उदाहरणत., एक शहर मे बिजली की सप्लाई एक कम्पनी करती है, इसी प्रकार गैस सप्लाई, पानी सप्लाई, यातायात के लिए बस व्यवस्था आदि की बात है । ये सब एकाधिकार संस्थाएँ है । इन्हें इसलिए प्रोत्साहित किया जाता है कि जनता यह समझती है कि इन विशेष कार्यों को कम खर्च और कुशलता से चलाने के लिए एक अकेली कम्पनी का होना अधिक अच्छा है ।

अधिकार के दुरुपयोग को रोकने के लिए एकाधिकारवाले उद्योग लोक-प्राधिकारी द्वारा की गयी व्यवस्था के अन्तर्गत काम करते है । कीमतें, उत्पादित माल की किस्म, सेवाएँ, मुनाफा सचालन-विधि, पोषण, सुधार, सुविधाओ के विस्तार आदि कार्य सार्वजनिक पर्यवेक्षण के अन्तर्गत रहते है । इन शर्तो के साथ एकाधिकार आपत्तिजनक नही

है। अमेरिकियो ने पूर्ण एकाधिकार को रोकने की कोशिश की है क्योंकि पूर्ण एकाधिकार उद्योग बाजार को अपना गुलाम बना लेता है और फिर वधुआ उपभोक्ताओ का शोषण करता है।

दूसरी ओर व्यापक उत्पादन तथा व्यापक वितरण पर आधारित मिश्रित अर्थ-व्यवस्था मे मूल्य-प्रतियोगिता सदैव संभव या वाछनीय भी नही है। मूल्य-प्रतियोगिता ऐसी हालत मे निश्चित रूप से सभव है जब दो समान कार्यवाले या उत्पादक, उदाहरणत. आइसक्रीम या सब्जी विक्रेता, गाँव के बाजार मे इसलिए अपनी कीमतों में कटौती करते हैं कि वे एक दूसरे के ग्राहको को अपनी ओर खीच सके। लेकिन ज्यो-ज्यो अर्थ-व्यवस्था अधिक जटिल तथा सुसगठित होती जाती है मूल्य प्रतियोगिता उतनी ही कम सभव होती जाती है। एक प्रकार के सारे उद्योग मे उत्पादन व्यय प्राय. समान होता जाता है, कच्ची सामग्री के मूल्यो में मामूली-सा अन्तर होता है, समान उद्योगो मे मुनाफे की मात्रा लगभग बराबर रहती है, मजदूर सघो के साथ वेतन सबधी जो समझौते किए जाते हैं वे एक विशेष उद्योग के कर्मचारियो के लिए न होकर संपूर्ण उद्योग के मजदूरों के लिए होते है। इन कारणो से 'स्वच्छद' पूंजीवाद की विशुद्ध मूल्य प्रतियोगिता की बात अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के केवल एक छोटे से क्षेत्र में लागू होती है।

बहुत से मामलो में अनियन्त्रित मूल्य प्रतियोगिता वाँछनीय नही है। जैसे-जैसे लागत और अन्तत. विक्रय कीमत एक समान होती जाती है, विरोधी उत्पादको के लिए कीमतो में कटौती की स्पर्द्धा सपूर्ण अर्थ-व्यवस्था की दृष्टि से लाभदायक नही हो सकती। इससे मुनाफे में भारी कमी तथा उद्योग के विस्तार एवं नवीकरण के लिए कोष में भारी कमी पड़ सकती है। कुछ उद्योग असफलता देख माल का स्तर गिराने के उपाय पर उतर आ सकते है। दूसरे घाटे की पूर्ति के लिए अगर वेतनों में कमी की गयी तो मजदूर सघ उसका विरोध करेंगे, जिसके गभीर सामाजिक परिणाम हो सकते हैं। संक्षेप में अनियन्त्रित मूल्य प्रतियोगिता

अगर सब स्थानों पर सदैव लागू की गयी तो उससे व्यवस्था का आधार ही कमजोर हो सकता है।

एकाधिकारवाले तरीकों का प्रतिरोध

निरंकुश एकाधिकार के प्रति अमेरिकी जनता में जबरदस्त विरोध की भावना कोई नयी बात नही है। निरकुश एकाधिकार तथा आपत्ति-जनक व्यावसायिक संयोजनो के प्रति विरोधी भावना उस समय से चली आ रही है जब अमेरिका एक उपनिवेश था। अमेरिकी क्रांति का एक कारण यह भी था कि ब्रिटिश व्यापारियो एव उद्योग-पतियो ने इस बात का प्रयत्न किया कि उन्हे उपनिवेशो मे तैयार माल के आयात पर कानून द्वारा एकाधिकार सत्ता प्राप्त हो जाए। ब्रिटिश पूँजीपतियों ने इन उपनिवेशो के निर्माताओ पर रोक लगा कच्चे सामान के लिए इंगलैंड को ही एकमात्र बाजार बनाने का भी यत्न किया।

सारा इतिहास देख डाले, अमेरिकी जनता का सदैव यह सिद्धान्त रहा है कि व्यक्तियो को अपने व्यवसाय संबधी निर्णय के लिए स्वतत्रता रहनी चाहिए। अमेरिकियो का विश्वास है कि माल का स्तर ऊँचा उठाने, अदक्षता दूर करने तथा उचित मूल्यो के निर्धारण के लिए व्यक्तियो तथा उद्योगों में खुलकर प्रतियोगिता होनी चाहिए। उनका यह भी विचार है कि स्वतंत्र उद्योग का लक्ष्य मुनाफा कमाना होना चाहिए क्योकि लाभ की संभावना से नए उद्योगो के लिए आकर्षण पैदा होता है और विकास की ओर अग्रसर अर्थ-व्यवस्था में नयी पूँजी लगती है। ये धारणाएँ इस मूल विश्वास से पैदा हुई है कि लोकतंत्री समाज में एक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार स्वतंत्रतापूर्वक कोई भी व्यापार अथवा व्यवसाय करने और अपने परिश्रम का फल भोगने का अधिकार है। इस बुनियादी सिद्धान्तों के कारण ही एक शताब्दी पूर्व का अविकसित अमेरिका आज उन्नत औद्योगिक राष्ट्र बन सका है।

स्वतंत्र रूप से व्यवसाय के चुनाव तथा कार्य करने की धारणा

अमेरिका में इस विश्वास के कारण कुछ प्रभावित हुई है कि जनता के प्रति सरकार के कुछ उत्तरदायित्व है, सरकार को सबसे पहले इस बात का ध्यान रखना है कि कार्य की स्वतंत्रता का यह अर्थ नही कि कोई इसकी आड़ में जनता को हानि पहुँचाए। यूरोप के आर्थिक क्षेत्र में 'स्वच्छंद' पूंजीवाद का परिणाम जबकि प्रायः अराजकता तथा निर्बलों एवं असफलो का शोषण रहा, अमेरिकियो ने कानून के मातहत आर्थिक स्वतंत्रता पर बल दिया है।

गृह युद्ध के पश्चात् अमेरिका में उद्योगों का काफी विस्तार हुआ। शक्तिशाली कार्पोरेशनो (निगमो) की स्थापना हुई। अनेक कार्पोरेशनो ने प्रतियोगिता को समाप्त करने तथा अर्थ-व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण क्षेत्रो को अपने प्रभुत्व मे लाने का यत्न किया तथा बहुतो को इसमे सफलता मिली। एक सबसे अधिक सफल उपाय था ट्रस्टो (न्यासो) का बनाना। सबद्ध कंपनियों के हिस्सेदार अपना हिस्सा ट्रस्टियो के एक बोर्ड के नाम कर देते और बदले में 'ट्रस्ट प्रमाणपत्र' ले लेते। इस प्रकार ट्रस्टियो का कई संबद्ध कपनियो पर पूर्ण नियत्रण हो जाता था और कभी-कभी तो बाजार पर काफी हद तक आधिपत्य प्राप्त हो जाता था जो प्रायः एकाधिकार ही होता था। शीघ्र ही 'ट्रस्ट' शब्द ऐसे सभी प्रकार के बडे व्यावसायिक-सयोजनो के लिए लोकप्रिय—अथवा बदनाम—हो गया जिनका उद्देश्य प्रतियोगिता को समाप्त करना था।

जनता मे रोष की भावना तब और भड़क उठी जब यह स्पष्ट हो गया कि इस प्रकार के एकाधिकारवाले सयोजनों के विरुद्ध कानून में उचित व्यवस्था नही है। जनता के दबाव पर १८८० में दोनो ही बड़े राजनीतिक दलो ने अपने-अपने मंच से ऐसे तरीकों की निन्दा की, जिनके द्वारा डेमोक्रेटिक पार्टी के शब्दों में 'ऐसे कुछ व्यक्ति अनुचित रूप से धनवान होते जा रहे है, जो जनता को स्वाभाविक प्रतियोगिता के लाभों से वंचित कर व्यवसायो का संयोजन कर लूट रहे हैं।' दस वर्ष बाद १८९० में एकाधिकार के विरोध में जनता की भावना के कारण सरकार

ने शरमन ट्रस्ट विरोधी कानून बनाया। इसमें यह व्यवस्था की गयी कि 'प्रत्येक करार, ट्रस्ट या अन्य रूप में, संयोजन या कुछ राज्यो के बीच अथवा विदेशी राष्ट्रो से मिलकर व्यापार एव वाणिज्य में बाधा का षड्यंत्र···गैर-कानूनी है।'

शरमन कानून को पास करना इस दिशा में पहला कदम था। इससे समस्या एकदम सुलझ नही गयी। एक तो इस कानून की शब्दा-वली इतनी लचीली थी कि उससे ट्रस्टो और व्यावसायिक सयोजनो के बनने के काम को रोका नही जा सका। बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ में बडे व्यावसायिक सयोजनो की चालो से बहुतो को तो यह विश्वास हो गया कि स्वतत्र व्यवसाय के आधार के लिए ही खतरा पैदा हो गया है। प्रेजीडेन्ट थ्योडोर रूजवैल्ट ने, जो 'विधिवत व्यापार' मे विश्वास करते थे, इन ट्रस्टों के खिलाफ आन्दोलन छेड़ा। परिणाम यद्यपि जनता की आशा के अनुकूल नही रहा तथापि कानून के मातहत आर्थिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिए रूजवैल्ट का आन्दोलन एक नाटकीय कदम था।

लेकिन अभी और कानूनी कार्रवाई आवश्यक थी। वुडरो विल्सन ने अपने प्रथम प्रशासन मे कानून के अन्तर्गत 'नयी स्वतंत्रता' (न्यू फ्रीडम) की स्थापना का यत्न किया। शरमन कानून को मजबूत बनाने के लिए काँग्रेस ने १९१४ मे क्लेटन कानून पास किया। इसमे वरीयता प्राप्त उपभोक्ताओं के पक्ष में भेदभाव करने, विभिन्न बस्तियो के बीच मूल्यो मे अन्तर करने, कम्पनियाँ रखने, विभागों को परस्पर मिलाने या ऐसे अन्य सब कार्यों के लिए निषेध है जिनका लक्ष्य प्रतियोगिता को कम या समाप्त करना है। दूसरी ओर क्लेटन कानून ने मजदूर संघों को मजबूत किया। उसने व्यवस्था की कि 'ट्रस्ट विरोधी कानूनों की किसी भी बात का इस प्रकार अर्थ न निकाला जाय कि मजदूर संघों के अस्तित्व तथा कार्य पर रोक लगे।'

क्लेटन कानून के पालन की निगरानी और 'प्रतियोगिता के अनुचित तरीकों' को रोकने के लिए प्रशासकीय एजेंसी की स्थापना की गयी।

इसका नाम 'फैडरल ट्रेड कमीशन' (संघीय व्यापार आयोग) रखा गया। कमीशन ने प्रतियोगिता के अनुचित तरीको, का पता लगाने के लिए व्यापक आधार रखा। कानून के उल्लंघन का जरा सा भी संदेह होने पर कमीशन को उसके विरुद्ध सुनवाई करने तथा कार्य रोकने की आज्ञा जारी करने का अधिकार था। अगर कोई उद्योग उस आदेश का पालन नहीं करता था तो कमीशन को अधिकार था कि वह मामला संघीय अदालत में पेश कर दे।

कमीशन यद्यपि उसके संस्थापको की बडी-बडी आशाएँ तो पूरी नही कर सका फिर भी वह अनुचित और हानिकारक व्यापारिक हलचलों की ओर ध्यान आकृष्ट करके तथा उनके विरुद्ध कार्रवाई प्रारम्भ करके अर्थ-व्यवस्था को बचाए रखने में महत्त्वपूर्ण कारण रहा है।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् व्यापारी वर्ग में एकाधिकार उद्योग-सयोजनो की नयी लहर आयी। इनमे से कुछ तो व्यापक उत्पादन के परिणाम थे, क्योकि उनके लिए बडी आर्थिक इकाइयो की आवश्यकता पडी। और दूसरो का उद्देश्य प्रतियोगिता को रोकना और बाजार पर एकाधिकार करना था। फ्रैंकलिन डी० रूजवैल्ट की सरकार ने ट्रस्ट विरोधी कानूनो की पुनः व्याख्या करके और उन्हे लागू करके इन एकाधिकारवादी संयोजनो के विरुद्ध कदम उठाया। काँग्रेस द्वारा १९३६ में नियुक्त अस्थायी आर्थिक समिति का उद्देश्य ट्रस्ट विरोधी कानूनों का उल्लंघन करनेवालो पर मुकद्दमा चलाने के लिए आधार तैयार करना था। १९३६ में छोटे उद्योगो की रक्षा के लिए राबिन्सन पैटमैन कानून भी बनाया गया। इसके द्वारा विभिन्न बस्तियों में या व्यक्तियो को भेदभावपूर्ण कीमतो पर अथवा निर्बल प्रतिस्पर्द्धी को नष्ट करने के लिए अनुचित रूप से कम कीमतो पर माल की बिक्री गैर कानूनी करार दी गयी। इस कानून की कई बार उसे पेचीदा और निरर्थक बताकर, आलोचना की गयी पर अन्ततः वह काफी लाभदायक सिद्ध हुआ।

अगस्त १९३७ में शरमन कानून में मिलर्ड टाइडिंग्ज संशोधन द्वारा

न्याययुक्त व्यापार की भावना से व्यापक उत्पादन तथा व्यापक वितरण की आवश्यकताओ को संयुक्त करने का प्रयत्न किया गया। इसमें, जैसा कि मैक्गवायर कानून १९५२ में किया गया, व्यापक उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्था की विचित्रताओ को स्वीकार किया गया तथा व्यापार चिन्हो से अंकित माल को निश्चित कीमतों पर बेचने के लिए खुदरा व्यापारियो के साथ समझौता करने की छूट दी गयी। व्यापारिक चिन्हों से अंकित माल के लिए लक्स साबुन, जनरल इलैक्ट्रिक रेफ्रिजिरेटर या एलिगेटर का उदाहरण दिया जा सकता है। इस कानून का उद्देश्य उन 'न्याय-युक्त व्यापार' कानूनों को स्वीकृति प्रदान करना था जो कई राज्यो द्वारा बनाए गए थे। इन कानूनो ने खुदरा व्यापारियो के हाथ बाँध दिए और वे स्वेच्छा से किसी वस्तु की कीमत नही घटा सकते थे यहाँ तक कि ग्राहको को आकर्षित करने के लिए वे घाटे से भी माल नही बेच सकते थे। स्पष्टत: ऐसे तरीको से एक विशेष माल के उत्पादनकर्ता को प्रत्यक्ष आर्थिक हानि के बिना भी नुकसान था क्योकि इनसे उसके माल की प्रतिष्ठा घटती थी। इन तमाम विभिन्न कानूनो का व्यवहार मे प्रभाव काफी हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि न्यायालय उनकी किस प्रकार व्याख्या करते हैं। उदाहरणत, शरमन कानून ऐसे 'हर' करार, सयोजन या षड्यत्र की निन्दा करता है जो व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने १९११ मे स्टैंडर्ड आयल मुकदमे में कानून की व्याख्या करते हुए केवल उन करारों या समझौतों की निन्दा की जो व्यापार में 'अनुचित प्रतिबंध' लगाते हैं। इसे 'औचित्य के नियम' का सिद्धान्त कहा जाता है। इसमें व्यापारिक समूहों के मामलों पर विचार के लिए अदालतों को व्यापक आधार दिया गया। हाल में ही यद्यपि यह सिद्धान्त 'स्वयं उल्लघन' की धारणा के साथ संयुक्त कर दिया है। 'स्वयं उल्लंघन' से तात्पर्य उन तरीको से है जो खुद व खुद हानिकारक है जैसे कीमतें निश्चित करना, बहिष्कार, बाजारो का विभाजन, उपभोक्ताओं को बाँट लेना, तथा अनुचित रूप से कीमत

घटाकर प्रतियोगिता समाप्त करना। 'स्वयं उल्लंघन' तरीकों की सूची निरन्तर बढ रही है और इस प्रकार प्रतियोगितावाली अर्थ-व्यवस्था में वस्तुओ के चुनाव के लिए उपभोक्ताओं को अधिक स्वतन्त्रता का आश्वासन मिला है।

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में प्रतियोगिता

इनमें कोई सदेह नही कि अधिकाश अमेरिकी प्रतियोगिता से होनेवाले लाभो मे विश्वास करते है। उनके विचार मे प्रतियोगिता मानवीय सफलता, आर्थिक सम्पन्नता तथा सामान्य प्रगति की ओर ले जानेवाली एक प्रेरक शक्ति है। लेकिन 'प्रतियोगिता' से उनका तात्पर्य अर्थशास्त्रियो की 'मूल्य प्रतियोगिता' से नही। प्रतियोगिता से उनका अभिप्राय यह है कि ऐसी कीमतो पर अच्छा माल और अच्छी सेवाएँ प्रदान करके ग्राहको को आकर्षित किया जाय जो अधिकाश जनता दे सकती हो। उनका विश्वास है कि किसी भी हालत मे ग्राहक बदी न बन जाए और उसके सामने वस्तुओ के चुनाव का अवसर बना रहे। कुछ सार्वजनिक लाभ और सेवा के उद्योगो को छोडकर, जो अच्छी तरह सार्वजनिक पर्यवेक्षण के अन्तर्गत होते हैं, अमेरिकी उपभोक्ता के सामने स्वतंत्र प्रतियोगितावाले व्यापारो की लाइन सी लगी रहती है।

एक निष्पक्ष प्रेक्षक यह स्वीकार करेगा कि अमेरिकी उद्योग निरन्तर अपने उत्पादन एवं वितरण के तरीको के साथ-साथ माल के स्तर को उन्नत करने के लिए प्रयत्न कर रहे है। मानवीय आवश्यकताओ एवं इच्छाओ की पूर्ति के लिए उपायो एव साधनो में प्रगति अमेरिकी अर्थव्यवस्था का एक प्रधान लक्ष्य है।

एकाधिकारवाले उद्योगो के दृष्टिकोण से इस प्रकार का प्रयत्न विरोधी एवं अनावश्यक है। एकाधिकारवाले उद्योग नये उत्पादन, अच्छी सेवाओ और उन्नत सुविधाओ के विकास के लिए क्यो प्रयत्न करें जबकि वे इस बारे में आश्वस्त है कि बाजार उनका बदी है।

एकाधिकार में प्रयत्न के लिए कोई प्रेरणा नही ।

अगर अमेरिकी कार्पोरेशने (निगमे) हर साल अरबो डालर इन्ही उद्देश्यो के लिए खर्च करे जैसा कि वे करती हैं तो निश्चय ही वे एकाधिकारवादी प्रवृत्ति से बहुत परे है ।

अकेले एक वर्ष (१९५६) मे अमेरिकी उद्योगो ने अपने माल के विज्ञापन पर लगभग दस अरब डालर खर्च किए। स्पष्टतः इस विज्ञापन का उद्देश्य उपभोक्ताओं पर यह असर डालना है कि 'अ' कम्पनी का माल 'ब' कम्पनी के माल से अच्छा है। विज्ञापन मे इसी प्रकार समान प्रकार के उत्पादनो में तुलना निहित है ।

जब उद्योग पर एकाधिकार हो जाता है तो इस प्रकार की तुलना के लिए कोई अवसर नहीं रहता। फिर भी अमेरिका में अल्प सचार के कम से कम दो प्रमुख माध्यमों—रेडियो तथा टेलिविजन—की आय विज्ञापनो से ही होती है। अमेरिकी जनता रेडियो तथा टेलिविजन से मिलनेवाली सूचना एवं मनोरंजन के लिए प्रत्यक्ष पैसा नही देती लेकिन कालान्तर में इनके द्वारा विज्ञापित विभिन्न वस्तुओ को खरीदते समय उनके मूल्य मे ही वह पैसा अदा हो जाता है। यहाँ अदायगी के तरीके की बात प्रमुख नही, विशेष बात यह है कि अमेरिकी कार्पोरेशने अपने माल के प्रसार के लिए विज्ञापन करना आवश्यक समझती है क्योकि उन्हे अपने माल के लिए प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। अन्यथा उनका व्यय एक बेहूदा बात होगी ।

इसी प्रकार, उत्पादित वस्तुओ में सुधार पर खर्च करना व्यर्थ की बात होगी। फिर भी अमेरिकी फर्मे अनुसन्धान एवं विकास कार्यों पर बहुत पैसा खर्च करती हैं और अमेरिकी बाजार को निरन्तर नया अथवा उन्नत किस्म का ऐसा माल मिलता रहता है जो वर्षों तक प्रयोगशालाओं में अनुसन्धान कार्यो तथा उत्पादन की दिशा में प्रयत्नो का परिणाम होता है। उदाहरण के तौर पर जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी के लगभग एक तिहाई कर्मचारी इस समय ऐसी चीजों के उत्पादन में व्यस्त हैं,

जिन्हे १६३६ में कम्पनी तैयार नही करती थी। कार्निग ग्लास कम्पनी का अनुमान है कि १६५५ में उसकी दो तिहाई आय उन वस्तुओं से हुई जिनका विकास उन्होंने १६४० से किया था। ड्यूपोट कम्पनी की वार्षिक बिक्री का आधा भाग उन वस्तुओ का है जो पिछले २० सालो में ही उपयोग में आनी शुरू हुई है। इसी प्रकार जनरल फूड्स कार्पोरेशन ने १६५३ में अपनी रिपोर्ट मे कहा था कि उसकी बिक्री का १६ प्रतिशत भाग उन वस्तुओ का था जो द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विकसित की गयी थी। ऐसा अनुमान है कि सभी अमेरिकी उद्योगो की इस समय होनेवाली कुल बिक्री मे से पाँचवाँ हिस्सा ऐसी चीजो का है जो १५ वर्ष पूर्व नही थी।

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में अगर गैर-एकाधिकार व्यवस्था के और उदाहरणो की आवश्यकता है तो इन्हे प्रस्तुत किया जा सकता है। अमेरिकी उद्योगो ने १६५५ तथा १६५६ मे अपने कारखानो, मशीनो कार्यालयो तथा अन्य सुविधाओ के नवीकरण, विस्तार, तथा सुधार पर ७२ अरब डालर खर्च किए। १६५७ मे यह अनुमानित व्यय ३६ अरब डालर था। न्यू इंगलैड में तुलना में छोटी 'नार्थ ईस्ट एअर लाइन्स' को नए प्रकार के यात्री वायुयानो पर १ करोड़, ७० लाख डालर खर्च करने थे। उत्तरी कैलिफोर्निया में कन्टेनर कार्पोरेशन 'लाक्हीड' तथा 'डगलस एअर क्राफ्ट' में से प्रत्येक को अनुसन्धान एव सुधार के कार्यों पर करोड़ों डालर खर्च करने थे। हर क्षेत्र में अमेरिकी फर्में 'परस्पर प्रतियोगिता द्वारा' अच्छी सेवा एवं अच्छे उत्पादन के लिए प्रयत्न में लगी हैं।

[illegible]योगिता के कुछ रूप

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का निकट से अध्ययन करने से कई प्रकार की प्रतियोगिताओं के होने का पता चलता है। सबसे पहला प्रकार तो वह है जिसे 'प्रत्यक्ष' प्रतियोगिता कहा जा सकता है। यह समान प्रकार का उत्पादन और सेवाओं वाले उद्योगों में होता है। अमेरिका में इस

समय ४,२५०,००० छोटे बडे व्यापारिक धधे हैं, जिनमें चार करोड़ से अधिक व्यक्ति काम करते हैं। अनेक एक ही जैसा व्यापार करते है और परस्पर प्रतियोगिता द्वारा अपने ग्राहको की सख्या बढ़ाने पर लगे हुए हैं। कुछ स्थानीय क्षेत्रो मे प्रतियोगिता करते है और दूसरे राष्ट्रव्यापी स्तर पर। ग्राहको को आकर्षित करने के लिए वे कम कीमतो का लालच दे सकते है। लेकिन अधिकतर वे माल की श्रेष्ठता, अच्छी सेवा, उत्पादन को अधिक से अधिक आकर्षक बनाने, प्रभावशाली विज्ञापन, विक्रय की श्रेष्ठ योग्यता तथा जनता मे व्यापक सबधो मे विश्वास करते है।

अमेरिका की भाँति अत्यन्त सुसगठित अर्थ-व्यवस्था मे दो विभिन्न कम्पनियो द्वारा निर्मित रेफ्रिजरेटरो की कीमतो में बहुत मामूली सा ही अन्तर हो सकता है। ग्राहक इसके बाद अब दोनो में से एक की ओर तभी आकर्षित होगा जब कुछ अतिरिक्त उपयोगी बाते उसे दिखाई पड़ेगी। जैसे कम्पनी का नाम, पैसा लगाने की अच्छी शर्त या माल की श्रेष्ठता। यह एक नये प्रकार की प्रतियोगिता है, जो पुरानी मूल्य प्रतियोगिता से कोई मेल नही खाती। इससे अमेरिकी उपभोक्ताओ को यह निश्चय हो गया है कि उन्हे निरन्तर उन्नत और विभिन्न किस्म का माल मिलता रहेगा।

एक दूसरे प्रकार की प्रतियोगिता होती है जो 'परोक्ष' प्रतियोगिता कहलाती है। यह समान उत्पादन अथवा सेवाएँ करनेवाली कम्पनियों मे होती है। एक व्यक्ति एक शहर से दूसरे शहर के लिए विमान, बस, रेल या जहाज किसी से यात्रा कर सकता है। सामान ट्रको, रेलो या नदियो के रास्ते बड़ी नावों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचाया जा सकता है। एक ही प्रकार के व्यवसायवाली कम्पनियो में ग्राहको को आकर्षित करने के लिए प्रतियोगिता होती है। इसमें उनकी सम्बन्धित कीमतों (किरायो) का अवश्य महत्त्वपूर्ण कार्य होता है लेकिन कार्य दक्षता, गति, सुरक्षा और विश्वस्तता का भी अत्यन्त महत्त्व होता है। 'परोक्ष' प्रतियोगिता का एक और उदाहरण अल्मूनियम में देखने में

आता है। अमेरिका मे इस समय प्रारम्भिक अल्मूनियम उत्पादन करने वाली केवल तीन बडी कम्पनियाँ है। एक दम देखने से इन कम्पनियो की स्थिति एकाधिकारवाली जैसी लगती है। लेकिन वास्तव मे उन्हे न केवल परस्पर प्रतियोगिता करनी होती है बल्कि इस्पात, सीसा, जस्त या प्लास्टिक की 'अप्रत्यक्ष' प्रतियोगिता से भी टक्कर लेनी होती है क्योकि इन चीजो का और भी अनेक कामो मे उतनी ही अच्छी तरह उपयोग हो सकता है। शायद ही ऐसा कोई उद्योग होगा जो 'अप्रत्यक्ष' प्रतियोगिता का मुकाबला किए बिना अपनी सेवाएँ या उत्पादन प्रदान करता हो।

बाजार में एक तीसरी चीज भी कार्य-रत है, जो बहुत अशो मे प्रतियोगिता से मिलती-जुलती है। इसे हम 'समतोलन कारणों की पारस्परिक क्रिया' कह सकते है। इन कारणो के प्रभाव को एक उदाहरण द्वारा अधिक स्पष्ट किया जा सकेगा। मोटर बनानेवाले बडे उद्योग बडे-बडे इस्पात विक्रेताओं के महत्त्वपूर्ण ग्राहक होते हैं। अगर इस्पात की कीमतें बढती है या उसकी किस्म खराब होती है तो मोटर बनाने वाले उद्योग इस पर आपत्ति उठाएँगे और कीमतो तथा किस्म को उचित स्तर पर लाने की माँग करेगे। अन्यथा वे उपभोक्ताओ को उन कीमतो पर कारो की सप्लाई नही कर सकते जो कीमतें वे देने को तैयार है। इस्पात-उत्पादको को, जो मोटर कारखानो पर उनके प्रमुख ग्राहक होने के नाते निर्भर करते हैं, इन आपत्तियों पर गौर करना जरूरी है। मोटर कारखानो के दिवालिएपन से इस्पात कार्पोरेशनों का हित नही होगा। एक प्रकार से इन बडे कारखानो की भाँति उद्योग प्रतिदिन एक दूसरे की समस्याओं का सामना करते हुए एक दूसरे की क्षमता में समतोलन स्थिति बनाए रखते हैं।

एक और उदाहरण खुदरा सामान की दुकानों का दिया जा सकता है। इसके प्रबन्धको की मुख्य दिलचस्पी इसमें है कि ग्राहको को उचित दामों पर अच्छी किस्म का माल मिले। अगर उन्हे माल सप्लाई करने

वाले स्वेच्छा से कीमतो में परिवर्तन कर लें तो निश्चय ही वे उसका विरोध करेगे। अपने विरोध को वे उस झगडा करनेवाले उत्पादक का सामान बेचने के लिए लेने से इनकार करके और मजबूत कर सकते हैं। उनका यह कदम उस उत्पादक को नष्ट कर सकता है। इसका परिणाम यह है कि उपभोक्ता उचित मूल्य पर अच्छा माल खरीद सकता है।

प्रकृति का एक आधारभूत नियम यह है कि क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। ऐसा जान पडता है कि अर्थ-व्यवस्था के एक भाग मे प्रगति से दूसरे भाग में भी वैसा ही प्रयत्न होता है और अवरोध तथा समतोलन के कारण पैदा होते हैं।

उत्पादन को केन्द्रित करने का कारण कार्यदक्षता और अधिक उत्पादन की आवश्यकता हो सकती है। लेकिन एक कार्पोरेशन या उद्योग की प्रगति का जिन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है वे फौरन ही उस प्रभाव को बराबर करने के लिए अपनी शक्ति केन्द्रित कर लेते हैं। विशाल खरीदारो को विशाल विक्रेताओ का सामना करना पड़ता है, कच्चे माल का उत्पादनकर्ता तैयार माल के निर्माता का सामना करता है, उपभोक्ता वस्तुओ का निर्माता खुदरा दुकानदारों और खुदरा दुकानदार उपभोक्ताओं का सामना करता है, बड़े खाद्यान्न व्यापारियों को अनेक वितरकों से सौदा करना पड़ता है, व्यापारिक फर्मों के प्रबन्धकों को मजदूर संघों से समझौता करना होता है, यहाँ तक कि सरकार भी प्रतिदिन उद्योग का ग्राहक या मालिक के रूप में सामना करती है।

अमेरिका जैसी मिली-जुली अर्थ-व्यवस्था में बड़े-बड़े उद्योगो में कभी-कभी वैसी प्रतियोगिता नही होती जैसी एक सिद्धान्तवादी चाहता है। वे अपने साधनों और शक्ति को केन्द्रित करना अधिक लाभदायक समझते हैं। लेकिन अगर इस प्रकार के व्यापारिक संगठन सामान्य व्यापार के लिए खतरनाक दिखाई देते हैं, अर्थात् वे उपभोक्ताओं को अपना बंदी ग्राहक बनाने का यत्न करते हैं, तो तुरन्त ही जनता के दबाव पर सरकार हस्तक्षेप कर उनके विरुद्ध कदम उठाएगी। इस प्रकार

समतोलन के लिए जनता की राय और एक शक्ति हो जाती है । एक लोकतन्त्री समाज में एकाधिकार विरोधी कानून इस प्रकार की समतोलन शक्ति का ठोस उदाहरण है । यद्यपि यह सदैव उतना प्रभावशाली नही रहा जितना कि बहुत से अमेरिकी चाहेगे, फिर भी इसके कारण अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था पूर्ण एकाधिकार से मुक्त रही है ।

व्यापारिक फर्मो मे भी मजदूरो को आकर्षित करने के लिए स्पर्द्धा होनी चाहिए । अमेरिका मे प्रत्येक मजदूर इस बात के लिए स्वतन्त्र है कि वह एक नौकरी छोडकर दूसरी अच्छी नौकरी कर ले । इसलिए एक उद्योग को अपने मजदूर को कम-से-कम उतनी मजदूरी देनी ही चाहिए जितनी उसे अन्यत्र मिल सकती है । अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था 'मजदूरो को वर्दी' बनाने के विचार की भी उतनी ही विरोधी है जितनी वह 'वर्दी उपभोक्ताओं' की धारणा के विरुद्ध है ।

अन्त में निजी उद्योग पूंजी आकर्षित करने के लिए प्रतियोगिता करते है । चूंकि लाखो व्यक्ति मुख्यत. कार्पोरेशनो का रिकार्ड देखकर ही पूंजी लगाते है, इसलिए प्रत्येक फर्म के लिए निरन्तर प्रगति दिखाना लाभदायक है ।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था बहुमुखी प्रतियोगिता पर आधारित है । अमेरिका मे प्रतियोगिता सप्लाई और मांग की क्रिया द्वारा केवल मूल्य स्थिर करनेवाली शक्ति ही नही है अपितु अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था को आगे बढ़ानेवाली एक प्रमुख शक्ति है ।

७

व्यापार की दुनिया

लोकतन्त्रीय अर्थ-व्यवस्था में वस्तुओ के उत्पादन एवं वितरण तथा सेवा का काम मुख्यत. निजी उद्योग ही करते है लेकिन इससे सरकार पर उद्योगो के विषय मे कोई प्रतिबन्ध नही लग जाता। किसी योजना की विशालता या उसके महत्त्व के कारण अगर उसे सार्वजनिक क्षेत्र मे लाना होता है तो वैसा किया जाता है।

फिर भी अमेरिका मे आज चालीस लाख निजी उद्योग-धन्धे है। इनमे एक ओर जनरल मोटर्स जैसी बड़ी कार्पोरेशन है तो दूसरी ओर किसी कोने में स्थित एक पंसारी की दुकान। १९५६ में इनका वार्षिक उत्पादन तीन खरब डालर आंका गया था।

कार्पोरेशन

अन्य विभिन्न व्यापारिक धन्धों में निर्माण व्यवसाय से सबसे अधिक आय होती है तथा इनमें ही सबसे अधिक व्यक्ति काम करते हैं। १९५६ मे हुई राष्ट्रीय आय में से ३० प्रतिशत से अधिक भाग इन्ही निर्माण उद्योगों का था। एक शताब्दी पूर्व यह श्रेय कृषि को प्राप्त था। आज कुल राष्ट्रीय आय मे उससे छः प्रतिशत से कुछ ही अधिक आय होती है। राष्ट्रीय आय का लगभग १८ प्रतिशत भाग खुदरा तथा थोक व्यापारों से आता है, जो वित्त निगमो, बीमा, जमीन जायदाद, खान तथा निर्माण कार्यों की सयुक्त आय से अधिक है।

अमेरिकी राष्ट्रीय आय का ५५ प्रतिशत से अधिक भाग लगभग ६००,००० 'कृत्रिम स्रोतो' से उपलब्ध होता है। ये स्रोत अदृश्य, अस्पृश्य तथा केवल कानून की भावना के अन्तर्गत ही विद्यमान हैं जैसा कि

सर्वोच्च न्यायालय के प्रथम प्रधान न्यायाधीश जान मार्शल ने कहा था। ये 'कार्पोरेशन' बडे-बडे ऐसे विशाल उद्योगो से लेकर, जिनमे हजारो हिस्सेदार तथा कर्मचारी होते हैं तथा अरबो डालर की सम्पत्ति होती है, थोड़े से कर्मचारियो वाले छोटे उद्योग-धन्धो तक होते है। कार्पोरेशनो के ये 'कृत्रिम स्रोत' आज की अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के प्रमुख अंग हैं।

कार्पोरेशन एक ऐसा सघ होता है जो व्यक्तियो द्वारा कानून की विशेष धाराओ के अन्तर्गत विशेष उद्देश्यो को लेकर सगठित किया जाता है। इस प्रकार जनरल मोटर्स कार्पोरेशन लगभग ६००,००० हिस्सेदारो का ऐसा सघ है जो डेलावेयर राज्य के कानूनो के मातहत मोटर उद्योग तथा सम्बन्धित क्षेत्रो में व्यापार करने के लिए सगठित किया गया है।

कार्पोरेशन एक कानूनी इकाई समझी जाती है, वह उन व्यक्तियो से भिन्न होती है जो उसके मालिक होते है तथा उसका सचालन करते हैं। इसलिए कार्पोरेशन का कोई भी हिस्सेदार बिना अन्य हिस्सेदारो या कार्पोरेशन की स्वीकृति के ही अपना हिस्सा दूसरे को हस्तातरित कर सकता है। उदाहरणत., अगर जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी के ढाई लाख हिस्सेदारो में से वह एक हिस्सेदार है तो वह किसी दलाल को यह सूचना देकर कि वह अपना हिस्सा बेचना चाहता है, अपने शेयर बेचकर पैसा वापस प्राप्त कर सकता है।

इस सुविधा के कारण, कि एक हिस्सेदार आसानी के साथ अपने कार्पोरेशन के शेयर बेच सकता है, लोगो को ऐसे व्यवसायो में पूंजी लगाने के लिए प्रेरणा मिलती है।

एक बार शेयर जारी हो जाने के बाद, व्यक्तिगत हिस्सेदार की मृत्यु या दुर्भाग्य का अथवा कम्पनी के शेयरो की खरीदोफरोख्त का उस कम्पनी के अस्तित्व पर सीधा असर नही पड़ता। पुनः बेचने का एकमात्र परिणाम यह होता है कि नए हिस्सेदारो को वोट देने का अधिकार तथा डिविडेंड (लाभाश) की सुविधाएँ प्राप्त हो जाती है जो इससे पूर्व पहले के हिस्सेदार को प्राप्त थी।

चूंकि शेयरो के स्थानान्तरण का कार्पोरेशन पर कोई असर नही पड़ता, अत. उसे एक स्थाई आर्थिक सगठन समझा जाता है। अलबत्ता एक कार्पोरेशन अपने आपको उस हालत मे भग कर सकता है जब उसके अधिकार-पत्र की अवधि समाप्त हो जाए या हिस्सेदार उसे समाप्त करना तथा पूंजी बेबाक करना चाहे या फिर कम्पनी फेल हो जाए।

नियमत: कार्पोरेशनो का प्रबन्ध मालिक हिस्सेदारों द्वारा सीधा नही किया जाता। व्यावहारिक उद्देश्य से स्वामित्व तथा प्रबन्ध का काम अलग-अलग हाथो मे होता है हालाकि कार्पोरेशन प्रबन्धको के अपनी फर्मो मे बहुत से हिस्से होते है।

स्वामित्व को प्रबन्ध कार्य से अलग रखने का एक विशेष लाभ यह होता है कि प्रवन्धको की मुख्य दिलचस्पी फर्म की निरन्तर उन्नति मे रही आती है, केवल तुरन्त लाभ कमाने की ओर नही। हिस्सेदार यह चाहेगे कि उन्हे लाभाश (डिविडेण्ड) अधिक और शीघ्र मिले, लेकिन फिर भी प्रबन्धक यह निर्णय कर सकते है कि फर्म की दीर्घकालीन उन्नति के विचार से माल को कम मुनाफा लेकर नीची कीमतो पर बेचने मे हित है। वे इसी ख्याल से शुद्ध लाभ मे से बड़ी राशि को फर्म के नवीकरण तथा विस्तार के लिए 'पुन. व्यवसाय मे लगाने' का भी निर्णय कर सकते है।

हिस्सेदार डायरेक्टरों का एक बोर्ड (संचालक मण्डल) चुनते हैं। यह एक प्रकार की व्यवस्थापक समिति होती है जो नीति सम्बन्धी निर्णय करती है। डायरेक्टर प्रमुख नीति सम्बन्धी मामलों पर विचार के अतिरिक्त और भी कामो की देख-रेख करते है, वे प्रबन्धकों के कार्य-कलापों की निगरानी और उन पर नियन्त्रण भी रखते हैं। साथ-ही-साथ उद्योग की प्रगति तथा व्यवसाय की उन्नति के लिए करोड़ों डालरों की योजनाओ से लेकर कार्यालय के स्वागत-कक्ष की दीवार पर रोगन सम्बन्धी साधारण मामलों पर भी विचार करते हैं।

उनके निर्णयों को वास्तविक रूप में क्रियान्वित करने का दायित्व

एक नए प्रकार के व्यावसायिक हाथो में सौंपा जाता है जिन्हे व्यापार-प्रबन्धक कहते हैं। फर्म को चलाने और नीति को क्रियान्वित करने का वास्तविक काम यही व्यापार-प्रबन्धक करता है। एक उच्च व्यापार-प्रबन्धक का जीवन प्राय: अत्यन्त थका देनेवाला तथा मरण का सा लगता है। लेकिन फिर भी इन पदो के कारण जो भौतिक समृद्धि, प्रतिष्ठा अधिकार एवं सम्मान प्राप्त होता है उसे देखते हुए अनेक अमेरिकी इस भारी उत्तरदायित्व के प्रति भी आकर्षिक होते हैं। इन कठोर परिश्रमी व्यक्तियो ने अमेरिका के औद्योगिक विकास में बहुत योग दिया है और ऐसा उन्होंने हमेशा स्वार्थ सिद्धि के लिए नही किया।

जिस प्रकार नीति सम्बन्धी निर्णय नियुक्त अधिकारियो द्वारा किए जाते हैं, हिस्सेदारो द्वारा नही, उसी प्रकार कार्पोरेशन की जो सम्पत्ति होती है, जैसे मकान, मशीने तथा धन, उसकी मालिक कार्पोरेशन होती है, हिस्सेदार उसके मालिक नही होते।

इसी प्रकार ऋणों के सम्बन्ध में करार कार्पोरेशन द्वारा किए जाते हैं, हिस्सेदारो द्वारा नही। कार्पोरेशन सम्पत्ति की मालिक होती है तथा ऋण लेती है। बिना चुकते ऋणो के लिए व्यक्तिगत हिस्सेदार उत्तरदायी नही होता। इसलिए किसी कार्पोरेशन को ऋण देनेवाले अपने पैसे की अदायगी के लिए किसी व्यक्तिगत हिस्सेदार से नही कह सकते।

उदाहरण के तौर पर हम यह मान ले कि श्री जोन्स ने, जो एक मकान के मालिक हैं तथा फर्स्ट ट्रस्ट बैंक में जिनका बचत खाता (सेविंग्स खाता) है, टिटन कार्पोरेशन के १०० शेयर पाँच डालर प्रति शेयर के हिसाब से खरीदे। अगर टिटन कार्पोरेशन का दिवाला निकल जाय और उस पर कई हजार डालर का ऋण बाकी रह गया है, तो कार्पोरेशन को ऋण देनेवाले श्री जोन्स के घर या बचत खाते की रकम को जब्त नही कर लेगे। श्री जोन्स की हानि कुल ५०० डालरों तक सीमित रहेगी जो उन्होने १०० शेयरो के मूल्य के रूप में दिए थे।

इस प्रकार के सीमित दायित्व से व्यक्तिगत पूंजी-नियोजको को बहुत सरक्षण मिलता है। और इसलिए कार्पोरेशन व्यक्तिगत पूंजी को आकर्षित करने के लिए बडी अच्छी स्थिति मे है।

जन-पूँजीवाद

अमेरिका के औद्योगिक विकास में व्यापक पूंजी नियोजन कार्य अनिवार्य रहा है। इसके परिणामस्वरूप जनता का जीवन निर्वाह का स्तर ऊँचा उठा है। व्यापक पूंजी नियोजन के लिए भी कार्पोरेशन पद्धति ने जितना योग दिया है उतना और किसी ने नही।

व्यापक खपत की भाँति व्यापक पूंजी नियोजन का काम भी अधिकाश मध्यम आय के परिवारो द्वारा ही किया जा सकता है। दरिद्री पूंजी नही लगा सकते। उनकी तो सम्पूर्ण आय की जो थोड़ी ही होती है, खाना मकान व अन्य प्राथमिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए जरूरत रहती है।

अमेरिका में इन मध्यम आयवाले परिवारो के विकास ने साथ ही साथ व्यापक पूंजी नियोजक भी पैदा कर दिए है। इन परिवारो को अपनी बचत की पूंजी लगाने के लिए कार्पोरेशने मिल गई हैं।

व्यापक पूंजी नियोजन के विकास के लिए दो मुख्य शर्त्ते है। एक तो यह कि अधिकांश लोगो के पास इतना पैसा अवश्य होना चाहिए कि वे अच्छी तरह जीवन निर्वाह कर सकें और उसके बाद कुछ पूंजी बचा सकें। दूसरे लोगो मे फालतू पैसे को यूं ही उड़ाने खाने की बजाय या जमीन में गाड़ने की बजाय बचाने की इच्छा होनी चाहिए।

धन बचाने और नियोजन की इच्छा बहुत कुछ व्यावहारिक आकर्षणों पर निर्भर करती है, जैसी पूंजी के सुरक्षित रहने के साथ-साथ भौतिक लाभों की आशा। पूंजी नियोजन के लिए भिन्न-भिन्न कारण हो सकते हैं। एक व्यक्ति जो सेविंग्ज खाता खोलता है अपने धन पर ब्याज की आशा करता है, और साथ-ही-साथ 'संकट काल' के लिए बचत भी

करता है। एक बीमा करनेवाला अप्रत्याशित सकट से अपने परिवार को सुरक्षा प्रदान करना चाहता है, एक हिस्सेदार डिविडेण्ड (लाभाश) की आशा करता है, सरकारी या कम्पनियो के बौडो के मालिक पूर्व घोषित ब्याज की आशा करते हैं। अन्य पूंजी नियोजको का मुख्य उद्देश्य उन कम्पनियो की दीर्घकालीन उन्नति हो सकती है जिनमें वे पूँजी लगाते हैं। एक प्राइवेट सस्था, ब्रुकिग्ज इस्टीट्यूट मे अनुसधान करनेवालो के अनुसार पूंजी लगानेवाली अधिकाश जनता इस आशा से सीक्युरिटियाँ खरीदती हैं कि कालान्तर में उनकी बाजार मे कीमत वढ जाएगी।

अमेरिका मे मध्यम आय के परिवारो की सख्या वहुत हो गई है और इसके साथ-साथ इन परिवारो के लिए पूंजी नियोजन के अनेक आकर्षण भी पैदा हो गए हैं। इसका परिणाम यह है कि आज अमेरिका मे प्राय. सभी स्तर के व्यक्ति धन बचाते हे और उसका नियोजन करते है। यह उल्लेखनीय है कि कार्पोरेशनो के शेयरो व बौडो के मालिक ८६ लाख परिवारो मे से ५६ प्रतिशत मध्यम आय के परिवारो में से हैं। उनकी वार्षिक आय ४००० डालर से १० हजार डालर तक है। शेयरों तथा बौडो के व्यक्तिगत मालिको की कुल सख्या में अधिकाशतः कारीगर, अर्द्ध कारीगर, क्लर्क तथा घरेलू स्त्रियाँ आदि है। इनकी सख्या ५१ .५ प्रतिशत है।

११ करोड़ ३० लाख से अधिक अमेरिकियों ने किसी न किसी प्रकार का अपना बीमा कराया हुआ है। ३ करोड़ से अधिक परिवारो के बचत खाते हैं जबकि २ करोड १० लाख परिवारो के पास सरकारी बौड तथा सीक्युरिटियाँ हैं।

सीक्युरिटी तथा एक्सचेज कमीशन के (विनिमय आयोग) अनुमान के अनुसार १९५६ में बचत खातों में अमेरिकी जनता के ३७ अरब डालर जमा थे, ८८.८ अरब डालर की पूँजी सभी प्रकार के सरकारी बौडों मे लगी हुई थी, १०९.९ अरब डालर निजी बीमा व्यवसाय में लगे थे, तथा ३३५ अरब डालर की पूँजी कार्पोरेशनों के शेयरों तथा बौंडो

मे लगी थी। नीचे इन आंकड़ो की प्रतिशत के हिसाब से सक्षिप्त तालिका दी जा रही है।

पूंजी नियोजन का स्वरूप	एक या अधिक स्वामियों वाली कुल पारिवारिक इकाइयाँ प्रतिशत में
जीवन बीमा	८२. ३ प्रतिशत
बचत खाते	५२.८ ,,
अमेरिकी (ई) बौड	४१.६ ,,
वार्षिक वेतन व पेशने	२०.६ ,,
सार्वजनिक शेयर	१४.० ,,
व्यक्तिगत शेयर	४.६ ,,
सम्पत्ति रहन तथा बौड	२.७ ,,
कार्पोरेशनो के बौड	१ ३ ,,

कुल मिलाकर अमेरिका मे ६०.७ प्रतिशत परिवारो ने किसी न किसी रूप में अपनी पूंजी लगाई हुई है। 'जन-पूंजीवाद' का शायद यही सार है।

पूंजी नियोजन के नए तरीकों मे एक नया तरीका परस्पर पूंजी नियोजन कोष है। यह तरीका उन देशो के लिए विशेष रुचि का है जहाँ पूंजी नियोजन के लिए अत्यन्त विकसित व्यवस्था तथा सीधे पूंजी नियोजन की दृढ परम्परा नही है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका में इस प्रकार के कोषों की तेजी से वृद्धि हुई है। 'पारस्परिक पूंजी नियोजन कोष' के अन्तर्गत व्यवस्था इस प्रकार होती है कि यह कोष भिन्न-भिन्न कार्पोरेशनों के शेयर खरीद लेता है तथा फिर अपने शेयर जारी कर देता है। अब अगर कोई व्यक्ति इस कोष के शेयर को

खरीदता है तो वह एक तरह अप्रत्यक्ष रूप से अपनी पूंजी विभिन्न उद्योगो मे लगा देता है। इस प्रकार उसकी पूंजी अनेक उद्योगो में लग जाती है तथा उसका खतरा कम हो जाता है।

दिसम्बर १९४० में अमेरिका में ऐसे कोषो के २९६,००० शेयर होल्डर थे। सितम्बर १९५६ में यह सख्या बढ़कर २,४०२,००० हो गई। इसके साथ-साथ प्रति हिस्सेदार की औसत पूंजी १,५१३ डालर से बढकर १,५४० डालर हो गई। नवम्बर १९५६ में १३५ पारस्परिक पूंजी नियोजन कोषो की कुल पूंजी लगभग ९ अरब डालर थी।

इन कोषो की वृद्धि के जबरदस्त कारण है। व्यक्तिगत पूंजी नियोजकों, विशेषकर थोडा पैसा लगानेवालो को, प्राय इस बात का अनुभव और विशेष ज्ञान नही होता कि किन कम्पनियो मे वचन की पूंजी लगाई जाय। लेकिन उक्त कोष के डायरेक्टरो में ये दोनो ही बातें होती है। पूंजी लगाना ही उनका व्यवसाय है। इस प्रकार वे पूंजी नियोजकों की गम्भीर गलतियो से रक्षा करने के साथ-साथ उनका पैसा प्रगतिशील उद्योगों मे लगा सकते है।

पूंजी नियोजन के नए उत्साहवर्द्धक तरीको और मध्यम आयवालो की उन्नति से अनेक देशो को व्यापक पूंजी नियोजन का क्षेत्र तैयार करने तथा जन पूंजीवाद लाने मे सहायता मिलेगी जैसा अमेरिका में पाया जाता है।

९० प्रतिशत से अधिक जनता का अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था मे पैसा लगा होने के साथ अमेरिकियो के लिए उनके जन पूंजीवाद का विशेष सामाजिक महत्त्व है। इससे उन्हे अपने राष्ट्र तथा उसकी अर्थ-व्यवस्था की रक्षा के लिए और उन्नत तथा विस्तारवादी अर्थ-व्यवस्था के लिए सीधा तथा व्यक्तिगत कारण मिल जाता है।

'वाल स्ट्रीट एकाधिकार' जैसे नारे केवल उन लोगों के लिए ही है जो या तो अज्ञानी है, या जिनको वास्तविकता की जानकारी नहीं है। करोड़ो अमेरिकी पूंजी नियोजकों के सामने धनी से धनी व्यक्ति भी

लाचार है। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था इन बहुसंख्यको पर ही आश्रित हैं। अमेरिकी जनता वास्तव मे अपनी राष्ट्रीय सपत्ति की मालिक है।

अनुसंधान तथा विकास

एक वास्तविक प्रतियोगितावादी अर्थ-व्यवस्था में व्यापार के प्रबन्ध के लिए अदक्षता, अपव्यय अवरोध तथा तानाशाही की प्रवृत्ति घातक हैं। अमेरिकी निजी उद्योगपति इस तथ्य को भली प्रकार समझते हैं। नई उत्पादित वस्तुओ तथा उपायों की खोज का काम अब केवल आविष्कारक का ही नही रह गया है। इस उत्तरदायित्व को अब उद्योग अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ पूरा करते हैं। इसे वे आर्थिक अस्तित्व का एक अविभाज्य अंग मानते हैं। पिछले १५ वर्षों में विशेष रूप से यह विचारधारा पनपी है। औद्योगिक प्रयोगशाला बड़े पैमाने पर काम करती है, उन्हे 'प्रगति का मार्ग प्रशस्त' करना ही चाहिए। आधुनिक अमेरिका के निर्माण में वैज्ञानिक खोजो का उतना ही हाथ है जितना और किसी चीज का। प्रयोगशालाओ में परीक्षण करनेवाले व्यक्तियो को निरन्तर नए उत्पादनों व सामानो की बाढ लाने, सम्पूर्ण रूप में उद्योगों के विकास तथा नए रोजगारों के लिए व्यापक अवसर प्रदान करने का श्रेय है।

आर्थिक प्रगति तथा स्थायित्व के लिए वैज्ञानिक अनुसधान की महत्ता तथा यथार्थता द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् मालूम पड़ी जब फौजी सामान बनाने के लिए दिए गये बडे-बड़े आर्डरों को रद्द कर देने से प्रतिरक्षा उद्योगों पर असर पडा और दूसरी ओर उपभोक्ता उद्योग के सामने जनता की दबी हुई माँगों को पूरा करने की समस्या आ गई। वैज्ञानिक खोज ने दोनो ही समस्याएँ हल कर दी। इससे अमेरिकी उद्योगों को नए क्षेत्रों में काम करने में सहायता मिली, जिससे लाखों अमेरिकियों को नई नौकरियाँ मिली, इसने नए माल तथा उत्पादन तरीकों का विकास किया जिससे उपभोक्ताओं की बढ़ी हुई माँग को

शीघ्र सन्तोषजनक ढंग से पूरा किया जा सका । इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ प्रेक्षको द्वारा जो यह आशंका व्यक्त की गई थी कि युद्ध के पश्चात् भारी गिरावट आएगी वह सच नही हुई ।

नई उत्पादित वस्तुओ तथा तरीको के विकास के लिए सच्चे प्रयत्नो पर भारी खर्च की आवश्यकता पड़ती है । मैकग्रा-हिल द्वारा प्रकाशित 'व्यापार का नौवा वार्षिक पर्यवेक्षण' पुस्तिका के अनुसार अकेले १९५६ में अनुसधान तथा विकास के कार्यो पर पाँच अरब डालर से अधिक खर्च किए गये । अनुमान है १९५७ में इस मद मे ६ ३ अरब डालर व्यय हुए । यह खर्च चार हजार औद्योगिक प्रयोगशालाओ मे काम करने वाले लगभग २००,००० वैज्ञानिको पर हुआ । समस्त अनुसधान तथा विकास कार्यों पर लगभग दो तिहाई खर्च निजी उद्योगो द्वारा किया जाता है तथा शेष राशि का अधिकाश भाग सरकार से प्राप्त होता है ।

उद्योगो मे अनुसधान तथा विकास कार्यों पर बहुत बल दिया जाता है । कुल मिलाकर १५,००० से अधिक कम्पनियाँ बडी वैज्ञानिक योजनाओ में सलग्न है, इसमें विशुद्ध खोज सम्बन्धी कार्य भी शामिल है । १९५० से लेकर अब तक अमेरिकी उद्योगो ने अनुसधान तथा विकास कार्यों पर इतना व्यय किया है कि पिछले १७० वर्षों मे भी इतना नही किया गया ।

अणु शक्ति, विमान निर्माण, प्रेक्षपणास्त्र, रसायन, कपड़ा, सकलन, बिजली तथा पैट्रोल उद्योगो में अनुसंधान तथा विकास कार्यों का महत्त्वपूर्ण योग रहा है । डेक्रोन या नाइलोन से लेकर रेडियो सक्रिय आइसोटोप तक बिलकुल नए प्रकार की वस्तुओ का उत्पादन इस बात का प्रमाण है कि अमेरिकी व्यापारियो ने अनुसंधान तथा विकास कार्यो में कितनी सफलता प्राप्त की है ।

व्यापार और शिक्षा

उद्योगो मे आजकल प्रबन्धको के पद पर अत्यन्त शिक्षित व्यक्ति

रखे जाते है । मैनेजर बननेवाले सभी व्यक्तियो के लिए कालेज की डिग्री 'आवश्यक' शर्त है। कोलम्बिया विश्वविद्यालय का 'ग्रेजुएट स्कूल आव बिजनेस', हार्वर्ड का 'स्कूल आव बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन' तथा पेन्सिलवानिया विश्वविद्यालय का 'हार्टन स्कूल आव फाइनेन्स एण्ड कामर्स' इस बात के ज्वलत उदाहरण है कि उद्योगो की जटिलता तथा प्रतियोगितावादी अर्थ-व्यवस्था में प्रतिभा और ज्ञान की आवश्यकता के कारण शिक्षा में कितना विकास हुआ है।

भावी व्यापार प्रबन्धको की शिक्षा केवल व्यावसायिक प्रशिक्षण तक ही सीमित नही है। हार्वर्ड के 'स्कूल आव बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन' ने यह अनुभव करके कि व्यापार के अन्तर्गत केवल बाजारो की स्थिति या उनके रूप को समझाने का ही काम नही रह गया है, बल्कि उसके अतिरिक्त और भी बातों को जानने की जरूरत है, १९४५ से अपना पाठ्यक्रम बदला और भावी व्यापार प्रबन्धको को वित्त, व्यापार तथा हिसाब-किताब की शिक्षा के अतिरिक्त विश्व की सामयिक समस्याओ तथा स्थिति का भी ज्ञान कराना प्रारम्भ किया। अनेक विश्वविद्यालयो ने अब इस व्यापक पाठ्यक्रम को अपना लिया है।

शिक्षित व्यक्तियो की महत्ता को समझने के बाद व्यापारियो ने उच्च शिक्षा के लिए संस्थाओं को निरन्तर आर्थिक सहायता दी है। अनुमान है कि अकेले १९५६ के वर्ष मे निजी अमेरिकी उद्योगो ने १० करोड़ डालर कालिजों तथा विश्वविद्यालयों को दिए। उच्च शिक्षा के लिए व्यापारियो का आर्थिक योग १९५० से दुगुने से अधिक हो गया है। व्यक्तिगत व्यापारियों या धनिक परिवारों द्वारा स्थापित संस्थाएँ शिक्षा के प्रसार कार्य में और सहायता करती हैं। १९५६ में एक संस्था 'फोर्ड फाउंडेशन' ने विश्वविद्यालयों, अनुसंधान केन्द्रों तथा अन्य शिक्षा संस्थाओं को ६० करोड़ २० लाख डालरो का अनुदान दिया।

स्वतंत्र व्यापक उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्था में विज्ञापन

१९५६ में अमेरिकी व्यापारियों ने ४५ हजार व्यक्तियों को १०

अरब डालर खर्च करने का भार सौपा। उन्हें इस बात की छूट दी गयी कि वे इस धन को जिस प्रकार चाहे खर्च करे। उनसे जो अपेक्षा की गयी थी वह केवल यह थी कि वे इन व्यापारियो के उद्योगो में बनने वाली वस्तुओ के लिए अधिक ग्राहक बनायें।

ये ४५ हजार व्यक्ति विज्ञापन एजेसियो के लिए काम करते हैं, जिन्होंने अमेरिकी उद्योग तथा कृषि उत्पादनों के प्रसार का भार उठाया है। यह संभव नही है कि वास्तविक लाभो के बिना ही ये समझदार व्यापार प्रबन्धक इन एजेंसियो को हर साल बड़ी राशियाँ दे देते हों। फिर भी विज्ञापन उद्योग की कभी-कभी कटु आलोचना होती है। उस पर आरोप लगाया जाता है कि वह जनता को झूठे सुनहले सपने दिखा-कर अधिक पैसे खर्च कराता है और उसे भौतिकतावादी बनाता है। विज्ञापन आन्दोलनों को अगर अनैतिक नही तो प्रायः बेहूदा तथा रस-विहीन कहकर आलोचना की जाती है।

यह सत्य है कि अमेरिकी विज्ञापनकर्ता कभी-कभी भौतिक भावनाओ को उभारते है और उनके आन्दोलन सास्कृतिक स्तर से नीचे होते है। लेकिन यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि विज्ञापन एजेंसियों का मुख्य उद्देश्य अपने उद्योगों के माल का बाजार बढाना है, देश के सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाना नही। सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाने का काम शिक्षा व धर्म का है। वैसे जैसे-जैसे लोगों का यह स्तर उँचा उठता जाए विज्ञापनो का स्तर भी उसी प्रकार ऊँचा उठना चाहिए। सस्ते विज्ञापनों का जनता केवल मजाक बनाती है और क्योकि वे प्रभाव-हीन होते है, उस माल की खपत नही होती। पिछले कुछ सालों में विज्ञापनों का स्तर ऊँचा उठाने की दिशा मे निश्चित रूप से कदम उठाए गए हैं।

अमेरिकी विज्ञापनो का तीव्र आलोचक भी इस बात से इनकार नही कर सकता कि और कोई भी तरीका जनता की मांगो को इतने व्यापक रूप से नहीं बढ़ाता। विज्ञापन उद्योग नए माल का प्रचार कर

देता है और बाजार मे अच्छी माग पैदा कर प्राविधिक प्रगति को आगे बढाता है।

विज्ञापन केवल प्रतियोगिता से सयोगवश उत्पन्न हुई वस्तु नही है, यह स्वय प्रतियोगिता को प्रोत्साहित करता है। इसके अतिरिक्त अधिक और अच्छी वस्तुओं की लालसा उत्पन्न करने के कारण यह व्यापक उत्पादन का एक प्रमुख कारण है। इसके समर्थको का कहना है कि व्यापक उत्पादन को प्रोत्साहन देकर विज्ञापन उद्योग माल की किस्म मे सुधार तथा कीमतों को कम रखने मे योग देता है। यदि जनता का वह दबाव, जो विकसित उच्च विज्ञापन द्वारा व्यक्त होता है, न हो तो 'किचन मिक्सर' जैसी चीज जो आज ६ पौड वजन की है और जिसका मूल्य कुल १६ डालर है, क्रमश: १५० पौड का तथा १२८ डालर की कीमत का हीं रहना। यह भी कहा जाता है कि अगर विज्ञापन न हो तो प्रचलित ६२६ पत्रिकाओ. १२०० दैनिक समाचार-पत्रो, ६००० साप्ताहिको, २,६४७ रेडियो स्टेशनो तथा ४६५ टेलीविजन स्टेशनो का, जो ३ करोड ८० लाख घरो की सेवा करते है, अस्तित्व ही प्राय. लुप्त हो जाय।

अगर कोई माल विज्ञापन के अनुरूप नही उतरता तो जनता उसे खरीदने से इनकार कर देगी। कोई भी विज्ञापनकर्ता जनता की इस बड़ी शक्ति की उपेक्षा नही कर सकता। इसलिए ईमानदारी के साथ विज्ञापन कोई असामान्य बात नही है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अमेरिकी उपभोक्ता विज्ञापनों पर उन्हें ठीक माल बताने वाला समझ विश्वास करने लगे हैं। वे विज्ञापनकर्ताओं से यह आशा करते है कि अनुसंधान के परिणामस्वरूप उत्पादित नई वस्तुओं को वे जनता के सामने लायेंगे।

संक्षेप में ऐसी त्रुटियो के रहते हुए भी, जो टाली नही जा सकतीं, विज्ञापन उद्योग अमेरिका में माँग बढ़ाने तथा व्यापक उत्पादन के लिए वातावरण बनाने में एक महत्त्वपूर्ण कारण है।

प्रवृत्ति और उद्देश्य

प्रतियोगितावादी अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तियों की आवश्यकता के कारण व्यापार में ऊँची जगहे उन लोगो के लिए हो गई है जो भारी उत्तरदायित्व को उठाने में समर्थ है। हर साल व्यापारियों के प्रतिनिधि अमेरिकी विश्वविद्यालयो में प्रतिभाशाली स्नातकों के लिए पूछताछ करते है। मामूली-सा कारोबार प्रारम्भ करके आज व्यक्ति व्यापार के शिखर पर पहुँच गए है, उनके मार्ग में किसी प्रकार की कठोर वर्ग या पारिवारिक बाधाएँ नही थी। ऐसे व्यक्तियो के नामो से, जिन्होने मामूली सा व्यापार प्रारम्भ किया और व्यापारिक क्षेत्र में विश्वास तथा नेतृत्व के ऊँचे शिखर पर पहुँच गए, एक बड़ा ग्रन्थ बन जाएगा। शिखर तक पहुँचना कोई आसान काम नही है, अनेक व्यक्ति लुढक जाते है, लेकिन पारिवारिक पृष्ठभूमि अथवा राष्ट्रीयता के कारण कोई असफल नही होता।

प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियो की निरन्तर खोज व्यापारी सद्भावना पैदा करने के लिए नही करते अपितु अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में यह अत्यन्त आवश्यक है। जो उद्योग प्रतिभा की उपेक्षा करते हैं उन्हें भारी आर्थिक हानि उठानी पडती है क्योंकि उनके मुकाबले के दूसरे उद्योग प्रगति कर जाते हैं। अमेरिकी जैसी प्रतियोगितावादी अर्थ-व्यवस्था में पक्षपात, कट्टरता तथा अदक्षता को कोई स्थान नही है।

यह सवाल प्रायः पूछा जाता है कि अमेरिकी उद्योगो का वास्तव में कौन नियंत्रण करता है? यह सत्य है कि कुछ ऐसे उद्योग धंधे हैं जिन पर शक्तिशाली व्यक्तिगत धनिक व्यापारियों का नियंत्रण है। यह भी सच है कि एक छोटे पूंजी नियोजक का उस उद्योग की प्रतिदिन या दीर्घकालीन नीतियों पर कोई भी सीधा नियंत्रण नही होता जिसके शेयर उसके पास हैं। लेकिन यह एकदम पड़नेवाला प्रभाव कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था पर कुछ शक्तिशाली व्यापारी वाल स्ट्रीट के अपने कार्यालयों से

नियंत्रण करते हैं, छलपूर्ण है। निकट से देखने पर पता चलता है कि स्थिति सर्वथा भिन्न है।

एक छोटे पूंजी नियोजक के लिए एक बड़ी व्यापारिक फर्म के नित्य के कार्यो तथा नीतियो पर सीधा नियत्रण कर सकना व्यावहारिक कारणो से असभव है। न तो उसके पास विस्तृत जानकारी होती है और न आवश्यक अनुभव। इन कामो को करने के लिए अत्यन्त प्रशिक्षित व्यक्ति अत्यन्त ऊंचे वेतनो पर नियुक्त किए जाते है। अगर हर पूंजी नियोजक अपनी इच्छा के अनुसार कम्पनी के कामो मे दखल देने लगे तो अव्यवस्था फैल जाएगी। फिर भी एक पूंजी नियोजक इन कुटिल अर्थ-व्यवसायियो के हाथ का कोई निर्बल प्यादा नही होता। लाख व्यक्तिगत पूंजी नियोजक अन्तत प्रभावशाली नियंत्रण करते है। एक उद्योग के शेयरो को खरीदने में या उनसे छुटकारा पाने में वे हर रोज प्रबन्धको मे विश्वास अथवा अविश्वास का मत व्यक्त करते हैं। यह वास्तव में पर्याप्त नियंत्रण है। किसी भी एक व्यक्ति के पास इतना धन नही होता कि वह एक कार्पोरेशन में उसकी आवश्यकता के अनुसार पूंजी लगा दे। कार्पोरेशन को अपने लिए आवश्यक पूंजी के निमित्त जनता के व्यापक नियोजन पर निर्भर रहना चाहिए। अगर किसी उद्योग के रिकार्ड में कुप्रबन्ध, अदक्षता, अस्थिर प्रगति या निरन्तर विकास के अभाव का उल्लेख होता है तो जनता तथा पूंजी लगाने वाली संस्थाएं उस उद्योग में पूंजी लगाने के पहले अच्छी तरह विचार कर लेंगी। इस वास्तविक नियंत्रण की कोई भी व्यापार प्रबन्धक उपेक्षा नही कर सकता।

निजी उद्योग के पीछे मूल प्रवृत्ति मुनाफा कमाने की होती है और जब तक व्यक्ति अपना निजी व्यापार करता है तब तक वह अपने लिए नफा कमाने के प्रयत्न में लगा रहता है। लेकिन बड़ी-बड़ी कार्पोरेशनो में मुनाफा की यह प्रवृत्ति कैसे काम करती है जहाँ बड़े पैमाने पर अमेरिकी उत्पादन तथा वितरण होता है।

इन कार्पोरेशनों के मालिक व्यापक और लाखो व्यक्ति होते है जो देश के सभी भागो में बसे होते है। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ फर्मों में प्रबन्धको का कोई शेयर न हो या फिर थोड़ी सख्या मे हो। तब प्रबन्धक किसके लिए मुनाफा कमाने का प्रयत्न करते है ? नाममात्र में वे मालिको के लिए मुनाफा कमाने की कोशिश करते हैं। वास्तव में यह केवल एक प्रवृत्ति है, जो अधिक प्रबल नही है। अधिकांश अमेरिकी व्यापार प्रबन्धक यह मानते है कि वे केवल हिस्सेदारो के प्रति ही उत्तर-दायी नही है अपितु कर्मचारियो तथा उपभोक्ताओं के प्रति भी उनका उत्तरदायित्व है। वे तीनो वर्गो के विरोधी रुखो में संतुलन रखने का प्रयत्न करते है। कालान्तर में सुव्यवस्थित उद्योग हिस्सेदारो के लिए लाभ कमाते है, कर्मचारियो को अच्छा वेतन तथा नौकरी की स्थिरता प्रदान करते है, और उपभोक्ताओ के लिए सस्ते दामो पर बढ़िया माल बनाते है। व्यापार प्रबन्धको को इन तीनो वर्गो की आवश्यकताओ की ओर ध्यान देना होता है क्योकि वे इन तीनो की सद्‌भावना तथा सहयोग पर निर्भर करते हैं। फिर भी प्रतिदिन वे कारोबार में तथा दीर्घकालीन लक्ष्यो में प्रबन्धको का मुख्य ध्यान अपने उद्योग की आय तथा उसके विकास से सबंधित होता है। उनकी नौकरी, उनका जीवन इसकी सफलता या असफलता पर निर्भर करता है।

कार्पोरेशनो में विभिन्न विभागों के प्रबन्धको के बीच प्रतियोगिता तथा स्पर्द्धा रहती है। उत्पादन विभाग का वाइस प्रेजीडेंट इंजीनियरिंग विकास के लिए अधिक धन की माँग कर सकता है, विक्रय विभाग टेलीविजन पर प्रचार कर माल की खपत बढ़ाने के लिए विज्ञापन का बजट बढ़ाने का प्रस्ताव कर सकता है, अनुसधान विभाग का प्रधान और उन्नत सामान के लिए कह सकता है, इत्यादि। सचालक-मडल से अपनी अपनी बात मनवाने के लिए उन्हें अपने कामो का परिणाम दिखाना पड़ेगा, उन्हें यह बताना चाहिए कि उन्होने कितनी सफलता प्राप्त की है तथा भविष्य में उनकी क्या योजना है ? एक विभाग की सफलता या

विफलता का अर्थ उस विभाग के प्रधान की व्यक्तिगत सफलता या विफलता है।

× × ×

अधिकांश अमेरिकी व्यापारियो का एक नैतिक स्तर होता है और वे उसके अनुसार कार्य करते है। वैसे अमेरिका में कुछ बातो पर कानूनी रूप से प्रतिबंध है, क्योकि वे सारे समाज के लिए हानिकर है। बहुत सी गुप्त समझौतो के जरिए अलग कर दी गई है। कई व्यापारो में कुछ बाते ऐसी होती है जो बस की नही जाती, जैसा कि एक बार एक व्यापार प्रवन्धक ने मुझे बताया। व्यापार प्रबन्धक एक लम्बी अवधि में मुनाफे में नियमित, धीरे-धीरे तथा स्थिर वृद्धि के लिए प्रयास करता है। वह ऐसी ऊँची छलागे लगाने की कोशिश नही करता जो कायम न रखी जा सकें और कालान्तर में हानिकारक सिद्ध हों।

स्वतंत्र अर्थ-व्यवस्था में लुटेरी प्रवृत्तियों का जनता द्वारा विरोध निश्चित है जिससे अस्वस्थ्यकर प्रवृत्तियों पर रोक के लिए कानून बनाए जाने की संभावना रहती है। ऐसा होता रहा है और भविष्य में भी तब तक होता रहेगा जब तक स्वतत्रता रहेगी।

८

संगठित मजदूर

मानवीय कारबार में व्यवस्था या तो कानून की बाध्यता के कारण स्थापित होती है या फिर उन परस्पर संघर्षात्मक शक्तियो के कारण जो अन्तत. सामान्य समझौता करवाती है। एकाधिकारवादी औद्योगिक व्यवस्था मे प्राय समस्त आर्थिक सम्बन्धो का एक राजनैतिक प्रवर के आदेशों पर कठोरता के साथ नियमन किया जाता है। इसकी तुलना मे लोकतंत्री व्यवस्था के अन्तर्गत वैयक्तिक प्रेरणा तथा समतोलन शक्तियों को कार्य के लिए पूरा अवसर मिलता है। अमेरिका में इन शक्तियो में से एक शक्ति श्रमिक-आन्दोलन है।

मजदूर यूनियनों के प्रमुख उद्देश्य

अमेरिकी मजदूर यूनियनों का मुख्य कार्य अपने सदस्यों और देश के उपभोक्ताओ को राष्ट्र के उत्पादन का अधिक से अधिक हिस्सा प्राप्त कराना है। मजदूर उपभोक्ताओं के लिए पर्याप्त क्रय-शक्ति प्राप्त करके ये यूनियने सरकार के सहयोग से व्यापक खपत का बाजार बनाए रखने में सफल होती हैं।

अमेरिकी मजदूर यूनियनो की गतिविधियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। समस्त श्रमजीवी अमेरिकियो मे से एक चौथाई से अधिक इनमे शामिल है। संसार के अन्य भागों मे राजनैतिक दृष्टिकोण से चलने वाले श्रम-आन्दोलनों की तुलना में अमेरिकी मजदूर यूनियनो ने केवल एक बड़े उद्देश्य पर अपनी शक्ति केन्द्रित की है : वर्तमान स्वतन्त्र व्यवसाय की व्यवस्था के अन्तर्गत अपने सदस्यो के लिए ऊँची मजदूरी तथा काम करने की अच्छी अवस्थाये प्राप्त करना। वे साम्प्रतिक व्यवस्था को

बदले बिना ही अधिक हिस्सा प्राप्त करने की कोशिश करती रही है। परिणामतः आज अमेरिकी मजदूर के जीवन यापन का स्तर संसार में सबसे ऊँचा है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अमेरिकी मजदूर यूनियनो ने उचित कानूनी व्यवस्था के लिए जोर दिया है लेकिन प्रबन्धकों के साथ सीधी बातचीत पर उन्होने और भी अधिक भरोसा किया है। अपनी माँग पूरी कराने के लिए सामूहिक वार्ता द्वारा समझौता व वार्ता उनका एक प्रमुख तरीका बन गया है।

पिछले बीस वर्षो में अमेरिकी मजदूरो की शक्ति बहुत बढी है। ऐसे बहुत से आदमी हैं जो यह समझते हैं कि कुछ यूनियन नेता अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर रहे हैं। इस बात के प्रमाण दिए गए है कि कुछ यूनियनो में अपराधी तत्व घुस गए है। वे केवल सदस्यता तक सीमित नही अपितु उनके नेतृत्व पर भी कब्जा कर बैठे है। फिर भी, जनता की आवाज पर श्रमिक आन्दोलन स्वय इन अवांछनीय तत्वों को दूर करने के लिए लोकतन्त्री तरीको पर चल रहा है।

अमेरिका में श्रमिक आन्दोलन का विकास

अमेरिकी मजदूर आन्दोलन को आज जितनी शक्ति प्राप्त है उतनी पहले कभी नही थी। यह सच है कि अमेरिका के औपनिवेशिक जीवन काल में एक प्रकार के कुछ मजदूर संगठन थे। लेकिन गृह-युद्ध के पश्चात् ही उद्योगो का विस्तार होने पर अमेरिकी मजदूरों ने राष्ट्रीय संगठन बनाने के लिए प्रयत्न किया। इस दिशा में पहला उल्लेखनीय कदम १८६९ में उठाया गया जब 'नाइट्स आव लेबर' (श्रम-सरदार) की स्थापना हुई। 'नाइट्स' ने विभिन्न मजदूर यूनियनो को इकट्ठा कर एक संघ बनाया। इसकी स्थापना के पीछे राजनैतिक उद्देश्य था तथा इस पर मार्क्स के सिद्धान्तों का प्रभाव था। मजदूरों के लिए काम करने की शर्तों में सुधार की मांगें पूरी करवाने के लिए 'नाइट्स' ने अपने संघर्ष

की चरम सीमा के समय हिंसात्मक कार्यों से पूर्ण हड़ताले करवाई। १८८६ में 'अमेरिकन फैडरेशन आव लेबर' (अमेरिकी मजदूर संघ) की स्थापना के बाद उक्त संघ का प्रभाव कम हो गया। अमेरिकी मजदूर संघ ने 'नाइट्स' मजदूर-संघ से विपरीत नीति अपनाई। उसने राजनीति में हस्तक्षेप का विरोध किया तथा मौजूदा राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्गत ही श्रम समस्याओं को सुलझाने के कार्य को अच्छा समझा।

पहले की मजदूर यूनियनो का काम आसान नही था। बातचीत के लिए अपने सदस्यो को प्रतिनिधि के रूप मे मान्यता प्राप्त कराने के लिए उन्हें मालिको के बड़े विरोध, मजदूरों की उपेक्षा तथा जनता के अविश्वास का सामना करना पड़ा। प्रथम विश्वयुद्ध तक मजदूर यूनियनों की सदस्यता धीरे-धीरे तथा अनियमित रूप से बढ़ी। युद्धकालीन आवश्यकताओ के कारण मजदूरो को लाभ पहुँचा। सरकारी अधिकारियों ने मजदूर नेताओ को श्रमिको के प्रवक्ता के रूप मे मान्यता प्रदान की। इससे मजदूर यूनियनो की प्रतिष्ठा बढी और १९२० तक मजदूर संघो की सदस्य संख्या ५० लाख तक हो गई।

लेकिन बाद में १९२०-२९ की अवधि में इन मजदूर यूनियनो का प्रभाव गिरा और सदस्य संख्या ३५ लाख तक रह गई। अनेक मालिकों ने यूनियनवाद के खिलाफ कडा मुकाबला किया। उन्होंने यूनियन में शामिल होनेवाले मजदूरों को न केवल नौकरी से निकाल दिया अपितु उनके नाम भी 'काली सूची' में दर्ज कर लिए अर्थात् उनके नाम दूसरे मालिको को सूचित कर दिए गए और उन्होंने ऐसे आदमियों को काम देने से इनकार कर दिया।

हिंसात्मक हड़तालों से भरपूर लम्बे सघर्ष ने अन्ततः अमेरिकी जनता को यह भली भाँति समझा दिया कि एक रचनात्मक श्रम-नीति निश्चित करना सबसे अधिक आवश्यक काम है। इस दिशा में १९२६ में पहला कदम उठाया गया जब रेलवे मजदूर कानून बना। इसके द्वारा रेलवे

मजदूर यूनियनो को सामूहिक रूप से संगठन और वार्ता का अधिकार दिया गया। उसके अनुसार मध्यस्थो की भी नियुक्ति की गई जो रेलवे मजदूरो तथा प्रबन्धकों के बीच होने वाले श्रम—विवादों को सुलझा कर समझौता कराते थे।

एक और उल्लेखनीय कदम नारिस ला ग्वारडिया कानून १९३२ था जिसके अनुसार श्रम-विवादो में अदालती आदेशो के प्रयोग सीमित कर दिए गए तथा मालिको द्वारा की जानेवाली वह कार्रवाई गैरकानूनी करार दी गई जिसके द्वारा वे किसी कर्मचारी को नौकरी पर रखने से पूर्व इस समझौते पर हस्ताक्षर करा लेते थे कि वह कर्मचारी किसी मजदूर यूनियन में शामिल नही होगा। १९३३ के नेशनल इण्डस्ट्रियल रिकवरी एक्ट (राष्ट्रीय औद्योगिक उत्थान कानून) तथा १९३५ के 'नेशनल लेबर रिलेशन्ज एक्ट (राष्ट्रीय मजदूर सम्बन्ध कानून) ने तो निर्विवाद रूप से यह पुष्ट कर दिया कि कर्मचारियो को अपने चुने हुए प्रतिनिधियो के जरिए 'सामूहिक रूप से अपने आपको सगठित करने तथा वार्ता करने' का अधिकार है। १९३५ के कानून ने जो वैगनर कानून के नाम से जाना जाता था—मजदूर यूनियनो तथा व्यापार-प्रबन्धको के बीच शातिपूर्ण वार्ता व सौदेबाजी को संघीय नीति का उद्देश्य बनाया। इसने मालिको की कुछ अनुचित कार्रवाइयों पर प्रकाश डाला और उन्हे गैरकानूनी करार दिया। इसने कानून के पालन की निगरानी के लिए राष्ट्रीय मजदूर सम्बन्ध बोर्ड की भी स्थापना की।

इस प्रकार कानून के प्रश्रय के कारण मजदूर यूनियनों की सदस्य संख्या १९३५ की ३५ लाख से बढ़कर १९४० में ९० लाख हो गई। एक बार फिर लोकतन्त्री व्यवस्था ने उन तरीको तथा शर्तों को दूर करने के लिए आवश्यक साधन प्रदान किए जिन्हें अधिकांश अमेरिकी सामाजिक एवं आर्थिक रूप से हानिकर समझते थे।

अनेक मालिकों ने मजदूर यूनियनों के तेजी से होनेवाले संगठनों का विरोध किया। लेकिन जैसे-जैसे समय गुजरता गया अधिक से अधिक

मजदूर यूनियनों को मान्यता मिलती गई। व्यापार करनेवाली नई पीढ़ी इस व्यवस्था की कार्य-पद्धति तथा सगठित मजदूरो के महत्व को अधिक अच्छी तरह समझती है।

अमेरिकी मजदूर संघ (ए० एफ० एल०) इस प्रकार की यूनियनों का संगठन या जो कार्य के अनुसार बनी थी, जैसे—बढई, ईटें बनाने वाले, नलों की मरम्मत करने वाले आदि—१९३०-३९ के मध्य मे उद्योगो के निरन्तर विकास के साथ, औद्योगिक मजदूरों के सगठन के सम्बन्ध में मतभेद पैदा हुआ। अमेरिकी मजदूर संघ चाहता था कि औद्योगिक मजदूर भी पहले से ही स्थापित इस सघ में शामिल हो जाएँ। दूसरी ओर बहुतो का यह कहना था कि मजदूर यूनियनो का सगठन उद्योगों के अनुसार किया जाय, जैमे एक यूनियन मोटर कारखाने की हो, एक इस्पात कारखाने के मजदूरो की और इसी तरह की दूसरी यूनियनें हो। परिणामतः अमेरिकी मजदूर सघ से कुछ यूनियने अलग हो गईं और औद्योगिक सगठनो की कांग्रेस की स्थापना हुई। अगले बीस वर्षो मे दोनों ही संघो (यूनियनो) की सदस्य सख्या और शक्ति मे वृद्धि हुई। अन्त मे १९५५ मे ये दोनो मजदूर संघ भी आपस में मिल गए और एक विशाल सगठन की स्थापना हुई जिसकी सदस्य सख्या एक करोड़ साठ लाख से अधिक थी।

दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान में मजदूरो की कमी तथा श्रमिक आन्दोलन को सरकारी समर्थन मिलने से मजदूर सगठन की शक्ति और बढ़ी। तभी उद्योगों में हड़तालें हुई जब कि राष्ट्रीय उत्थान के लिए औद्योगिक प्रगति को अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जा रहा था। इनमें से कुछ विवाद मजदूर यूनियनो के बीच अधिकार सम्बन्धी झगड़ों के कारण पैदा हुए। इस प्रकार की स्थितियाँ उत्पन्न होने पर अमेरिकी कांग्रेस ने १९४७ में टाफ्ट-हार्टले कानून पास किया। इसके द्वारा वैगनर कानून में संशोधन कर मजदूर यूनियनो की शक्ति पर विभिन्न प्रकार के अंकुश लगा दिए गए। इस कानून की अनेक बार उसे अनुदार कहकर आलोचना की गई

लेकिन हाल के वर्षों में टाफ्ट-हार्टले कानून से मजदूर यूनियनों के इस कार्य में कोई भी बाधा नही पड़ी कि वे अपने लिए लाभदायक समझौते कराने में सफल हों। निस्सदेह युद्धोपरान्त काल में मजदूरो के लिए जो लाभ प्राप्त किए गए वे पहले के लाभो से कही अधिक थे।

इस समय अमेरिकी मजदूर संघ और औद्योगिक सगठन कांग्रेस के नेता जोर-शोर से अपने दल की 'सफाई' में लगे है। वे अपराधी तथा स्वार्थी तत्त्वों को आन्दोलन से निकाल देना चाहते है। वे यह महसूस करते है कि संगठित मजदूरों का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि श्रम आन्दोलनो में अपने आपको न केवल बाहरी नियन्त्रण से अपितु अन्दरूनी भ्रष्टाचार से भी स्वतन्त्र रखने की कितनी योग्यता है।

श्रमिकों द्वारा संतुलन

हम इस बात पर बल दे चुके है कि अमेरिकी व्यवस्था के अन्तर्गत सगठित मजदूर यूनियन का प्रमुख उद्देश्य अपने सदस्यों के लिए अधिक आय प्राप्त कराना है। लेकिन मजदूरो के लिए अधिक क्रय-शक्ति प्राप्त कराने के साथ-साथ मजदूर यूनियनें व्यापक खपत बाजार को भी बनाए रखने में सहयोग देकर व्यवस्था को संतुलन रखने मे सहायता देती हैं।

अगर एक व्यापारी मुनाफे के अपने मूल उद्देश्यों को दीर्घकालीन प्रगति के विचार से संयमित करता है तो मजदूरों के लिए 'अधिक आय' के अपने प्रमुख लक्ष्य पर मजदूर यूनियन भी इस ख्याल से अंकुश लगाती है कि वेतनों में अधिक वृद्धि के कारण मुद्रा-स्फीति की स्थिति हो सकती है जिससे सारा लाभ ही समाप्त हो जाएगा। फिर भी न तो व्यापार के प्रबन्धक और न मजदूर नेता ही सन्त है, दोनों ही कभी-कभी ऐसे काम कर बैठते है जो राष्ट्र के लिए हानिकारक होते हैं।

मजदूर नेता जब अधिक वेतन की मांग पर जोर देते है तब वे व्यापारी वर्ग के विरोध और जन-भावना से संघर्ष करते है। कई विवाद जब बहुत उग्र रूप धारण कर लेते हैं तब वे सरकारी हस्तक्षेप की स्थिति

पैदा कर सकते है। इस प्रकार की संभावना यूनियन नेताओ के रुख मे कुछ नरमी लाती है जो वैसे सामान्य हित की उपेक्षा कर सकते हैं। लेकिन अमेरिकी मजदूर नेताओ ने अनेक बार यह दिखा दिया है कि उनमें न केवल अपनी यूनियनो के प्रति उत्तरदायित्व की जबरदस्त भावना है अपितु राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व को भी वे अच्छी तरह समझते हैं। यह तथ्य कि झूठे और स्वार्थी मजदूर नेता भी प्रसिद्धि पा सकते है, केवल यही सिद्ध करना है कि यह एक असामान्य बात है, नियम नही।

अपने सदस्यो के लिए नकद आय में वृद्धि कराने के साथ-साथ मजदूर यूनियनों ने ऐसे सामाजिक कानूनो के निर्माण पर भी बल दिया है जिनके द्वारा एक मजदूर के लिए न्यूनतम मजदूरी, काम के घंटो की सीमा, सुरक्षा नियम आदि कार्यो की व्यवस्था की गयी है। इस तथ्य को समझते हुए कि मजदूर संघो के सदस्यो के हित बाकी समाज के साथ सबद्ध हैं। मजदूर यूनियनों ने स्थानीय, प्रातीय, राष्ट्रीय यहाँ तक कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के भी सामाजिक कल्याण के कार्यों का समर्थन किया हैं।

न तो मजदूर यूनियन और न उसके सदस्यो ने ही कोई संयुक्त राजनैतिक मोर्चा बनाया है। सभी प्रकार के राजनैतिक आन्दोलनो में विभिन्न यूनियनें अलग-अलग उम्मीदवारों का समर्थन करती पाई जा सकती हैं। व्यक्तिगत दृष्टिकोण और भी अधिक मतभेदपूर्ण हो सकता है। लेकिन प्राय सभी मजदूर उन उम्मीदवारो का समर्थन करते हैं जिनकी मजदूर यूनियनो के प्रति 'सहानुभूति' होती है। फिर भी अगर कोई मजदूर यूनियन किसी उम्मीदवार को राजनैतिक समर्थन प्रदान करती है तो इससे उसका चुना जाना निश्चित नही हो जाता। मजदूर यूनियन के सदस्य केवल यूनियन की सदस्यता से ही सबद्ध नही, वे माँ-बाप, कर-दाता, धर्म-कर्म करने वाले, खेलो के प्रति उत्साही तथा क्लबों के सदस्य भी हैं। और एक चुनाव में ये दूसरी 'बाते' यूनियन की

सदस्यता की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो सकती हैं।

अधिक वेतन तथा अन्य लाभो के लिए माँग प्राय· कार्यकुशलता तथा आर्थिक प्रगति के लिए प्रेरणादायक होती है। व्यापारी लोग इसे उचित नही समझते कि मजदूरो की मजदूरी कम करके उत्पादन-व्यय कम किया जाय। मजदूर यूनियनो की देखरेख मे ऐसा कर सकना लगभग असभव सा है। इस प्रकार यह रास्ता बन्द होने पर, व्यापारी उत्पादन-व्यय कम करने के लिए नए और अच्छे उपाय खोजते है। इस प्रकार दूसरे शब्दो में मजदूर राष्ट्रीय आय का अधिक भाग लेकर अप्रत्यक्ष रूप से तकनीकी प्रगति को प्रोत्साहन देते है। इस प्रकार व्यापारिक तथा मजदूरो के उद्देश्यो के सयोजन एव समतोलन से अधिक उत्पादन को बढावा मिलता है। व्यापारियो का उद्देश्य यह है कि मुनाफा अधिक हो और मजदूरो का यह कि उन्हें मजदूरी अधिक मिले। प्रबन्धक प्रायः ऐसा करने की कोशिश करते है कि मजदूरो पर अधिक व्यय का भार उपभोक्ताओ पर डाल दिया जाय। लेकिन इस प्रकार की धोखाधडी की भी एक सीमा होती है क्योकि इससे फर्म के माल की व्यापार में खपत होनी बन्द हो जाएगी।

मजदूर यूनियनों के सभी कार्यों से उत्पादन तथा कार्यदक्षता को बढ़ावा नहीं मिलता। मजदूर रखने और उन्हें बरखास्त करने पर यूनियनो का नियंत्रण होने, वरिष्ठता के क्रम के अनुसार तरक्की, उत्पादन पर सीधा प्रतिबन्ध (उदाहरणतः यह प्रतिबन्ध कि एक ईंटें बनाने वाला एक स्थान पर एक दिन में निश्चित संख्या में ही ईंटें तैयार करेगा) और पहली मजदूर यूनियनो द्वारा किये गए यांत्रिक प्रगति के विरोध के कारण उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पडा है। लेकिन यांत्रिक प्रगति और विशेषकर स्वयंचालित मशीनों के प्रति आजकल के मजदूर नेताओं का रुख अत्यन्त सराहनीय है।

आज अमेरिकी मजदूर नेताओ की बडी समस्या यह है कि किस प्रकार मजदूरों को किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाए बिना यांत्रिक

प्रगति को आगे बढाया जाय। नियमित और स्थिर आय पर बल देकर मजदूर यूनियनें उपभोक्ताओ की क्रय शक्ति की रक्षा कर रही है और उद्योग अनुसंधान कार्यों द्वारा रोजगार के नए अवसर ढूंढने में लगे हैं। व्यापक खपत बाजार को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण सहयोग देकर मजदूर यूनियने अमेरिकी आर्थिक ढांचे का एक दृढ आधार बन गयी हैं।

मजदूर यूनियन की प्रवृत्तियाँ

केवल वेतन में वृद्धि समृद्धि की गारंटी नही है। व्यवहार में वेतनों में वृद्धि का अर्थ है मुद्रा का अधिक प्रचलन। इसके साथ अगर माल की सप्लाई न बढायी जाय तो मुद्रास्फीति की स्थिति पैदा हो जाती है अर्थात् बाजार मे 'माल' तो कम होता है और उसकी खरीद के लिए पैसा 'बहुत'।

इस प्रकार वेतनो में वृद्धि के साथ उत्पादन न बढने का परिणाम मूल्यों में वृद्धि या मजदूरो की छटनी हो सकता है। मजदूरी महगी होने से क्षुब्ध एक उद्योग अपने माल का विक्रय मूल्य बढ़ाने को बाध्य हो सकता है। नियमत: कीमतों में वृद्धि होने पर कुछ चीजो को छोडकर बाकियो की बिक्री कम हो जाती है। माल की बिक्री कम होने से उत्पादन भी गिरता है और इसका परिणाम मजदूरो को काम से हटाना होना है। कालान्तर में ये मजदूर उन उद्योगो मे काम पा जाते हैं जिनके माल की मांग बढ रही होती है। लेकिन उस दौरान में अनेक परिवारो को भारी कठिनाइयो का सामना करना पड जाता है।

अगर एक बडे उद्योग मे वेतन वृद्धि के साथ अन्य उद्योगो में भी उसी प्रकार वेतन वृद्धि होती है तो उत्पादन में गिरावट तथा बेकारी का खतरा टल सकता है, क्योकि सभी की आय बढने से चीजों की मांग बढ़ेगी और उससे उत्पादन बढेगा। फिर भी वेतन वृद्धि के साथ जब उचित रूप से उत्पादन नही बढ़ता तो मुद्रास्फीति की स्थिति पैदा हो जाती है, इससे मजदूरों को ही लाभ की बजाय हानि हो सकती है।

पिछले कुछ वर्षों में मजदूर नेताओ ने अपना ध्यान दूसरे लाभ प्राप्त करने की दिशा में लगाया है। ये लाभ सवेतन छुट्टी, मुनाफे में हिस्सेदारी की योजना, मनोरंजन की सुविधाएँ, स्वास्थ्य एवं अस्पतालो की सुविधा संबंधी है। लेकिन यह स्थिति इतनी गिरी हुई नही है। १९५६ तक मजदूर संघ पेंशनों तथा कल्याण कोषों की राशि २५ अरब डालर तक हो गयी थी। १९५७ में ८ अरब डालर की राशि और जुडने की आशा थी, जो पेंशन योजनाओं तथा जीवन बीमा कार्यक्रमों, बीमारी की तनख्वाहो, तथा अस्पताल व चिकित्सा सबधी लाभो के लिए बराबर रूप से विभाजित थी। अधिकाश उद्योगो की योजनाओं में तीन चौथाई धन मालिक और एक चौथाई कर्मचारी देते हैं। इन योजनाओं से साढ़े सात करोड़ से अधिक व्यक्ति लाभ उठा रहे है, जिनमे मजदूरो के परिवार तथा उन पर निर्भर प्राणी शामिल हैं।

इस प्रकार के पेंशन व कल्याण कोष इतने दृढ हो गए हैं और अच्छे समझे जा रहे हैं कि पूँजी नियोजन के लिए उन्हे एक महत्त्वपूर्ण स्रोत समझा जा रहा है। मजदूर यूनियनो, प्रबन्धको तथा जनता द्वारा ध्यान से निर्वाचित ट्रस्टियों की देखरेख मे इन कोषो से उद्योगों को नवीकरण और अच्छे व्यवसाय में धन लगाकर कार्य-विस्तार में सहायता मिलती है। नियमित रूप से सीक्युरिटियाँ खरीदकर वे स्थायित्व में भी अपना योग देते हैं।

हाल के कुछ वर्षों में बहुत सी यूनियनों ने नौकरी की 'गारन्टी' अथवा आय की सुरक्षा की 'गारन्टी' को अपना प्रमख लक्ष्य घोषित किया है। १९५५ में 'यूनाइटेड आटोमोबाइल' (संयुक्त मोटर कर्मचारी संघ) के मजदूरों को इस उद्देश्य में आंशिक सफलता भी प्राप्त हुई और उन्हें 'वार्षिक वेतन की गारन्टी' की सुविधा मिली। इस योजना के अन्तर्गत मोटर निर्माता अपने मजदूरों को इस बात की गारन्टी देते हैं कि जब भी उन्हें काम से अलग रखा जाएगा, साल के किसी भी समय मे उनके द्वारा अर्जित आय का ६५ प्रतिशत भाग दिया जाएगा। उद्योग

में इस प्रकार के 'छुट्टी' के दिन प्राय आते रहते है, जबकि कारखाने में नए माडल की कारें तैयार करने के लिए दूसरी मशीने लगानी पड़ती हैं। लेकिन चूँकि ऐसी अवधि कुछ सप्ताहो से अधिक की नही होती मोटर कारखानों के मजदूर अब इस बात से आश्वस्त हैं कि उन्हे सारे साल उचित आय होती रहेगी। कुछ मजदूर यूनियने जीवन निर्वाह व्यय के सूचक अक के आधार पर वेतन संबधी करार करती है, इस सूचक अंक मे वृद्धि होने या गिरावट होने से वेतनों में भी उसी के अनुसार वृद्धि या गिरावट होती है। इस प्रकार की व्यवस्था को मुद्रास्फीति पैदा करने वाली बताकर उसकी आलोचना की गयी है।

वार्षिक वेतन की गारन्टी, पेंशन कोष, सामान्यत ऊँची मजदूरी पूंजीवाद के अन्तर्गत 'श्रम-मूल्य' के मार्क्स सिद्धान्त से मेल नही खाते। लेकिन अमेरिकी व्यवस्था में ये बातें सार्थक हैं, जहाँ व्यापक उत्पादन के लिए व्यापक क्रय शक्ति अनिवार्य है।

अन्य देशों की मजदूर यूनियनों की भाँति अमेरिकी मजदूर यूनियने हडतालो का प्रयोग राजनीतिक उद्देश्यो से नही करती। अमेरिका में हडताल आर्थिक कारण को लेकर होती है जबकि यूनियन तथा प्रबन्धको के बीच वार्ता द्वारा कोई ऐसा हल नही निकल पाता जो दोनो को स्वीकार हो। लेकिन सामूहिक वार्ता भंग होने का उदाहरण कम ही मिलेगा। अमेरिका में हर साल एक लाख से अधिक श्रम करारो पर हस्ताक्षर होते हैं। इनमें से ९६ प्रतिशत शांतिपूर्ण वार्ता के परिणामस्वरूप किए गए होते है।

इस प्रकार अमेरिकी मजदूर यूनियनें अर्थ-व्यवस्था की अविभाज्य अंग है और अर्थ-व्यवस्था को सतुलित बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण योग देती हैं। कानून के संरक्षण में उन्होने शक्ति तथा धन दोनो की प्राप्ति की है, जिसका वे, कुछ बातों को छोड, प्रायः सदुपयोग करती है। वे राजनीतिक गुटबन्दी में न फंसकर आर्थिक समस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है। काम की शर्तें तय करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप

पर निर्भर रहने की अपेक्षा वे सामूहिक रूप से स्वतंत्र वार्ता को अधिक अच्छा समझती है। निजी कर्मचारियों की तकलीफों को दुकानों के प्रशिक्षित 'कारिन्दे' उन करारो के नियमों के अनुसार दूर करते है जो फर्म के साथ किये जाते है। हड़ताल एक राजनैतिक हथियार नही है, जिसका प्रायः और खुलकर प्रयोग होता हो, अपितु हडताल तभी की जाती है जब सामूहिक रूप से वार्ता मे गतिरोध पैदा हो जाता है और पच भी फैसला करने मे असफल होते हैं।

विशेषकर पिछले बीस वर्षो मे मजदूरो तथा प्रबन्धको का एक दूसरे के प्रति दृष्टिकोण बहुत बदला है। मालिको की कुछ ही दशाब्दियो पूर्व की यह इच्छा कि 'यूनियने किसी प्रकार नष्ट कर दी जाएँ' तथा मजदूरों का मालिकों को 'मानवों का निर्दयी शोषक' कहकर पुकारना अब अतीत की बाते हो चुकी है। पुरानी उक्तियाँ कभी-कभी सुनाई पड सकती हैं लेकिन अब उनमें वह कटुता नही जो पहले थी। बातचीत के दौरान में क्रुद्ध होकर जो इन पुरानी बातो को कहते थे अब उनमें विश्वास नही करते। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था 'पूंजीपतियो के शोषण' के समय से अब बहुत आगे निकल आयी है और जनता भी आर्थिक सिद्धान्तो को काफी समझने लगी है।

९

स्थायित्व की खोज

यह अब सिद्ध हो चुका है कि एक सफल अर्थ-व्यवस्था मे उत्पादन न केवल 'अधिकता' से होना चाहिए अपितु 'निरन्तर स्थिरता' के साथ होते रहना चाहिए। फिर भी दोनो बातें हमेशा एक साथ नही होती। प्रचुरता और प्रगति की स्थिति की अपेक्षा गरीबी और निश्चलता की स्थिति में स्थायित्व प्राप्त करना अधिक आसान है। प्रारम्भिक अर्थ-व्यवस्था शताब्दियो में भी थोड़ी बदल पाती है और उसके सामने जबर-दस्त आर्थिक उथल-पुथल की समस्याएँ नही आती। जिन्दगी का प्रवाह धीरे-धीरे चलता रहता है। लेकिन अत्यधिक विकसित और तेजी से बढ़नेवाली अर्थ-व्यवस्थाओ में यह समस्या सामने रहती है कि बिना किसी प्रकार की गंभीर आर्थिक उथल-पुथल के और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर अनुचित प्रतिबन्ध लगाए बिना किस प्रकार समृद्धि तथा प्रगति को बनाए रखा जा सकता है।

स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था में आर्थिक स्थायित्व

आर्थिक अस्थिरताओ के कारण अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था को पहले बहुत नुकसान उठाना पड़ा है। १९३१-३९ की अवधि की भीषण मन्दी का चित्र सामने है। उस वक्त को याद करके बहुत से व्यक्ति यह सवाल करते है कि क्या अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था बिना किसी प्रकार की गम्भीर आर्थिक उथल-पुथल के प्रचुर रूप से और निरन्तर उत्पादन करती रह सकती है।

इसका अन्तिम उत्तर शायद कभी भी न दिया जा सके। लेकिन इसी प्रकार के अन्य सवालो के निश्चित और दृढ उत्तर के लिए उन

कार्रवाइयों का अध्ययन करना चाहिए जो अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था मे स्थायित्व लाने के लिए और उसे आर्थिक आघातो से बचाने के लिए पिछले २५ वर्षो में की गई है।

अमेरिकी सरकार का यह प्रमुख उत्तरदायित्व है कि समृद्धि की स्थिति मे वह अर्थ-व्यवस्था को गम्भीर आर्थिक उथल-पुथल से बचाए तथा उसकी रक्षा करे।

आर्थिक प्रगति प्राय नए विचारो के क्रियान्वित होने तथा नए आर्थिक अवसरो के निकलने के परिणामस्वरूप होती है। लेकिन श्रेष्ठ खोजो, जैसे बिजली का उपयोग, प्लास्टिक का विकास, अणु-विकरण, आदि का कोई निश्चित समय नही होता। वे कभी भी हो सकती हैं। अत. उनके कारण जो प्रगति होती है उसमे एक स्थिर प्रवाह संभव नही।

और न एक राष्ट्र के उत्पादन तथा खपत को कठोर संतुलन में रखा जा सकता है। प्रगति और आर्थिक विकास के दौरान में साधारण परिवर्तनो का होना सामान्य बात है। हाँ, भीषण मन्दी अथवा अत्यधिक मुद्रास्फीति की स्थिति न तो सामान्य है, और न आवश्यक। इन स्थितियो के कारण स्वतन्त्र व्यापक उत्पादनवाली अर्थ-व्यवस्था का सामान्य काम-काज अस्त-व्यस्त हो जाता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् कम-से-कम दो बार ऐसा समय आया जब मामूली-सी गिरावट गम्भीर मन्दी का रूप ले सकती थी लेकिन सरकार के आर्थिक कदमों के कारण ऐसा नही हो सका। बहुत से अर्थशास्त्रियों का विश्वास है कि अदृष्ट संकटो को छोडकर, अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में अब स्थायित्व के मूल तत्त्व विद्यमान हैं। फिर भी हमें मानवीयकारण की उपेक्षा नही करनी चाहिए। क्योंकि स्वतन्त्रता के आधार पर बनी अर्थ-व्यवस्था की सफलता या विफलता मनुष्य की विचारशक्ति की क्षमता पर निर्भर करनी है।

आर्थिक अस्थिरता के कारण

अब हम संक्षेप में उन कारणों पर विचार करेंगे जिनके करण एक

स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था में अस्थिरता आती है। अर्थ-व्यवस्था के सचालन कार्य को सरल भाषा मे हम यो व्यक्त कर सकते है कि अर्थ-व्यवस्था धन का एक प्रवाह है जिसके अन्दर मनुष्यो को उनके काम के लिए पैसा दिया जाता है और उससे वे अपनी इच्छित वस्तुएँ खरीदते है। उत्पादन तथा वितरण के स्थानो पर श्रम का भी एक निरन्तर प्रवाह बना रहता है, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादित वस्तुएँ तथा सेवाएँ वापस जनता को उपलब्ध हो सकती है। दैनिक जीवन मे भी एक किसान अपनी सहायता के लिए मूल्य चुकाता है, फैक्टरी का मैनेजर मैकेनिक को पैसा देता है, विमान सर्विस वायुयान के चालक को पैसा देती हैं, कार्पोरेशन बौडो पर ब्याज देती है और इसी प्रकार यह चक्र चलता जाता है। अपनी सेवाओ के बदले लोगो को जो धन मिलता है, वे उसे आगे विभिन्न कामो में खर्च करते है। खाने के लिए पसारी को, गैस के लिए गैस कम्पनी को, चिकित्सा के लिए डाक्टर को, स्वच्छता तथा पुलिस की सुरक्षा के लिए नगर प्रशासन को और डाक, सड़क तथा जेट लडाका विमानो तक के लिए वे सघीय सरकार को पैसा चुकाते है।

इस प्रकार दो धाराएँ निरन्तर दो विरोधी दिशाओ में बह रही है। एक धारा सामान तथा सेवाओं की है, जो उपभोक्ताओ की इच्छित वस्तुओ के उत्पादन तथा वितरण के लिए लोगो के प्रयासो के पुल का काम करती है। दूसरी धारा धन के प्रवाह की है, लोगो को उनके काम के बदले जो धन मिलता है उसे वे सामान खरीदने तथा सेवाएँ प्राप्त करने में दूसरो को दे देते है। अगर दोनो ही धाराएँ समान रूप से स्थिर और ऊँचे स्तर पर बहती रहे तो अर्थ-व्यवस्था में स्थायित्व रहेगा तथा स्थिति सतोषजनक रहेगी। आर्थिक परिवर्तन साधारण होगे तथा वस्तुओं या सेवाओं के मूल्यों में अथवा व्यवसाय और आय मे उतार-चढाव विशेष नहीं होंगे।

लेकिन इन दोनों ही धाराओ को संतुलन मे रखने के लिए कई समस्याएँ बीच में आती है। वस्तुओ तथा सेवाओ की सप्लाई मे सदा

परिवर्तन होता रहता है। कुछ चीजे किसी खास मौसम मे ही बिकती है फिर भी उनका उत्पादन सारे साल होता रहता है। नया माल बाजार में आता है जिसका दूसरे उद्योगों के उत्पादन व व्यवसाय पर असर पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय उलझनो के कारण माल के उत्पादन तथा वितरण में अन्तर पड़ता है। सैन्य आवश्यकताओ के कारण श्रम तथा सामान को शस्त्रास्त्रो के उत्पादन मे लगाना पडता है। बाढ, सूखा या हडतालों के कारण इन दोनो ही धाराओ के शान्त प्रवाह में गड़बड पैदा हो जाती है।

परिवर्तन के ये कारण प्राय. सभी आधुनिक अर्थ-व्यवस्था मे एक जैसे हैं। लेकिन स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था मे परिवर्तनो का एक अतिरिक्त कारण है . चुनाव की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता। एक उपभोक्ता को इस बात की स्वतन्त्रता है कि वह जो वस्तु चाहे खरीद सकता है और जितनी मात्रा में खरीदना चाहे अपनी आर्थिक शक्ति के अनुसार खरीद सकता है। एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रबन्धको को सुविधाओ के विस्तार, नए किस्म के माल का उत्पादन, नई मशीनें लगाने या कम्पनी के मुनाफे को पुन: व्यवसाय मे लगाने की बजाय हिस्सेदारो को अधिक लाभाश वितरित करने की पूरी स्वतन्त्रता है। इस प्रकार के लाखो व्यक्तिगत निर्णय सामूहिक रूप से इन दोनो ही स्थितियो (धाराओ) में भारी परिवर्तन कर सकते हैं जिसका असर अन्ततः आय तथा व्यवसाय के स्तर पर पड़ता है।

एकाधिकारवादी औद्योगिक राष्ट्र में आर्थिक चुनाव की स्वतन्त्रता नहीं होती। सब निर्णय एक ऐसे राजनीतिक प्रवर द्वारा किए जाते हैं जिसका राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था पर नियन्त्रण रहता है। स्थायित्व प्राप्त करने के लिए इसमे स्वतन्त्रता के हनन का तरीका प्रमुख है। वास्तव में यह ऐसे समाज का एक और उदाहरण है कि जहाँ व्यक्ति को एक सर्वसत्ताधारी राज्य की इच्छा का दास बनना पड़ता है।

इसके विपरीत एक लोकतन्त्री समाज मे इस बात को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है कि व्यक्तिगत चुनाव की स्वतन्त्रता बनी रहे।

सरकार का मुख्य लक्ष्य यह होता है कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर अनुचित प्रतिबन्ध के बिना ही स्थायित्व प्राप्त किया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अमेरिकी जनता ने सरकार को कुछ अधिकार प्रदान किए हैं। इनका उद्देश्य मुख्यत धन की मात्रा और प्रवाह को नियमित करना है।

स्थायित्व की सुरक्षा के साधन

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था में धन की वास्तविक मात्रा दो बातो पर निर्भर करती है : धन की मात्रा (अर्थात् प्रचलन में कितने डालर हैं) तथा धन के प्रचलन की गति अर्थात् धन एक व्यक्ति के हाथ से दूसरे के हाथ मे कितनी तेजी से जाता है।

अगर धन के प्रवाह को माल और सेवाओ की सप्लाई के साथ सतुलन मे रखना है तो या तो डालरो (धन) की कुल मात्रा पर या मुद्रा के चलन की गति पर या दोनों पर नियन्त्रण रखना होगा।

अमेरिका में लोग जिस हिसाब से अपना धन व्यय करते हैं उस पर उस कानून का प्रभाव रहता है जिसके अन्तर्गत इस प्रकार के मध्यम आय के परिवारो के व्यापक विकास का समर्थन है जिनमे खपत की अधिक प्रवृत्ति है। यह प्रभाव अप्रत्यक्ष होता है तथा सरकार व्यक्तियो के निर्णयो पर नियन्त्रण नही करती। लेकिन सरकार को ऐसे कई अधिकार प्राप्त हैं जिनके द्वारा वह प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मुद्रा की 'सप्लाई' नियमित कर सकती है।

१९४६ के रोजगारी कानून के अन्तर्गत अमेरिकी सरकार आर्थिक स्थायित्व की रक्षा के लिए वचनबद्ध है। इस कानून का सार यह है कि सरकार स्वतन्त्र औद्योगिक प्रतियोगिता की व्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग, श्रम तथा कृषि को अधिकतम रोजगार तथा उत्पादन को प्रोत्साहन देने और भारी मन्दी तथा मूल्यों मे घातक घट-बढ़ को रोकने मे सहयोग देगी। अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था के विकास में यह कानून एक दृढ आधार बन गया है। युद्धोपरान्त काल में विश्व की अस्थिर स्थिति के बावजूद

इसी के सिद्धान्तो के कारण गम्भीर आर्थिक गड़बड़ी होने से बच गई।

सरकार सामान का राशन करने, मूल्य निर्धारित करने तथा माल व श्रम बाँटने जैसे कठोर कदम उठा सकती है। लेकिन एक स्वतन्त्र सामाजिक व्यवस्था मे इस प्रकार के कदम सकटकाल मे ही उठाए जाते हैं। यह सकटकाल युद्ध तथा आर्थिक आपत्ति का हो सकता है। अमेरिकी सरकार का मुख्यतः अप्रत्यक्ष व्यवस्था नियमो में विश्वास है। उसके पास बहुत से ऐसे साधन है जिनके द्वारा वह आय तथा रोजगार में स्थिर वृद्धि कर सकती है और सतुलन के स्थानो पर होनेवाली घट-बढ को दूर कर सकती है।

मुद्रा सम्बन्धी नीतियाँ

सरकार के पास जो शक्तियाँ है उनमे एक 'मुद्रा सम्बन्धी नीति' है। इस नीति का सम्बन्ध मुख्यत. बैंक व्यवस्था से होता है और इसको क्रियान्वित करने का काम 'फैडरल रिज़र्व सिस्टम' के आधीन होता है। मुद्रा की मात्रा पर नियन्त्रण के लिए रिजर्व सिस्टम द्वारा जो उपाय काम में लाए जाते है उनमे एक है कथित 'आरक्षण-आवश्यकताएँ'। लगभग सात हजार प्राइवेट बैंक 'फैडरल रिज़र्व सिस्टम' के सदस्य हैं। इन सदस्य बैको को आरक्षित कोष में अपनी सम्पत्ति का एक निश्चित प्रतिशत हिस्सा 'फैडरल रिजर्व बैंक' की बारह शाखाओ में से किसी एक शाखा में जमा कराना पड़ता है। इस कोष की राशियाँ फैडरल रिजर्व सिस्टम के डाइरेक्टरो के बोर्ड द्वारा घटाई या बढाई जा सकती हैं। फैडरल रिजर्व आरक्षित कोष की राशि को घटाता है तो बैक अधिक स्वतन्त्रता के साथ ऋण दे सकते हैं और पूँजी लगा सकते है। उधार की दर गिरने से बाजार के रुख में 'नरमी' आ जाती है, अर्थात् ब्याज की दर गिर जाती है। लेकिन जब 'फैडरल रिज़र्व' इन राशियों को बढ़ाता है तो स्थिति इसके विपरीत हो जाती है।

पिछले अनुभवों के आधार पर अमेरिकी बैंक 'फैडरल रिज़र्व' की

कारंवाइयो के प्रति अत्यन्त सतर्क व जागरूक रहते हैं। रिज़र्व राशियों में जरा-सी भी वृद्धि को वे खतरे का सकेत समझते हैं। इस प्रकार आरक्षित राशि में वृद्धि का प्रभाव मुद्रा सप्लाई पर तो सीधा पड़ता ही है, बैंक व्यवसायियों पर मनोवैज्ञानिक असर भी होता है जिसे मामूली नही समझा जा सकता।

फैडरल रिज़र्व को एक और जो अधिकार प्राप्त है वह है पुन. बट्टा काटने के समय' व्याज दर को ठीक करना। एक सदस्य बैंक, रिज़र्व बैंक में हुँडी (कार्मशियल पेपर) जमा कराकर या कानूनी प्रमाण देकर कि उसका ऋण चढा हुआ है, जिस पर रिज़र्व बैंक पुनः बट्टा काटेगा, अपने बैंक के नकद कोष या निवेश (डिपाज़िट) मे वृद्धि कर सकता है। अगर फैडरल रिज़र्व ऋणो को तथा व्यय को प्रोत्साहन देना चाहता है तो पुनः बट्टा काटने की दर कम कर दी जाती है, अगर वह ऋणो को कम करना उचित समझता है तो वह बट्टे की दर बढा देता है।

फैडरल रिज़र्व के पास एक और उपाय यह है कि वह 'खुले बाजार में खरीदोफरोख्त' कर सकता है। बैंक इच्छानुसार खुले बाजार मे सदस्य बैंकों को सरकारी सीक्युरिटियाँ बेच सकता है या खरीद सकता है। जब फैडरल रिज़र्व खरीदता है मुद्रा का प्रचलन बढ जाता है, जब वह बेचता है तो पूँजी पुन. रिजर्व के पास आ जाती है और बाजार में चलन कम हो जाता है। इसके बाद जब तक गवर्नरों का बोर्ड उचित नही समझता वह इस स्थिति में परिवर्तन नही करता। पुनः बट्टे की दर को ठीक करके तथा खुले बाजार में खरीदोफरोख्त द्वारा फैडरल रिज़र्व मुद्रा की सप्लाई पर एक नियमित नियन्त्रण रखता है। इन उपायों का सीधा आर्थिक प्रभाव तो पड़ता ही है इसके अतिरिक्त इनमें राष्ट्र के लिए फैडरल रिज़र्व की प्रवृत्तियों तथा आर्थिक स्थितियो के प्रति उसके रुख का संकेत भी मिलता है।

'पुनः बट्टा काटने' की कार्रवाई तथा 'खुले बाजार में' कार्रवाई में भारी अन्तर है। 'खुले बाजार' में खरीदोफरोख्त में शुरूआत पूरी तरह

फैडरल रिज़र्व के हाथ में रहती है। दूसरे शब्दो मे फैडरल रिज़र्व यह फैसला करता है कि बाजार में सरकारी सीक्युरिटियो की खरीदोफ़रोख्त देश की संपूर्ण अर्थ-व्यवस्था के लिए लाभदायक है या नही।

इन उपायो, जो प्राय ऋण तथा मुद्रा सप्लाई को प्रभावित करते है, के अतिरिक्त तीन और अधिक चुनीदा उपाय है। वे है शेयर बाजार ऋण, उपभोक्ता ऋण तथा जायदाद संबंधी ऋण।

यह प्राय. माना जाता है कि 'मार्जिन विषयक आवश्यकताओ' अर्थात् सीक्युरिटियो के लिए कानूनी रूप से आवश्यक नगद धन के अनुपात को नियमित करने से शेयर बाजार में अधिक ऋण का खतरा कम हो जाता है, तथा बाजार का उतार-चढ़ाव सुरक्षित सीमाओं के भीतर बना रहता है।

सरकार के पास एक और उपाय संकटकाल में उपभोक्ता ऋण पर अस्थायी रोक लगाने का है। उपभोक्ता ऋण को उचित रूप से संयमित करके उपभोक्ताओ की माँग को सप्लाई की स्थिति के अनुरूप किया जा सकता है। दूसरी ओर जब अधिक खपत आवश्यक जान पड़े तब प्रतिबंध हटा देने से उपभोक्ता माँग बढ़ाई जा सकती है।

इसी प्रकार के उपाय अपनी जायदादो, विशेषकर रहने के मकानो, पर ऋणों को नियमित करने के लिए प्रयोग में लाए जा सकते है। इस प्रकार के कुछ ऋणों को नियमित करने का अधिकार १९५० में अस्थायी रूप से राष्ट्रपति को दिया गया था जब अत्यधिक मुद्रास्फीति तथा प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं ने ऐसा जरूरी कर दिया था। अब ये प्रतिबंध हटा दिए गए हैं।

वित्तीय नीतियाँ

'सुदृढ़ वित्त' संबंधी पुराना सिद्धान्त यह था कि सरकार वांछनीय योजनाओ को समृद्धि की अवस्था में ही क्रियान्वित कर सकती है। लेकिन अब यह सिद्धान्त रद्द हो चुका है। कोई भी आधुनिक अर्थशास्त्री यह

सुझाव नही देगा कि आर्थिक मन्दी के दौरान मे 'मितव्ययिता' की नीति पर चला जाय। इसके विपरीत आधुनिक आर्थिक विचारधारा यह है कि कर तथा व्यय नीतियो अर्थात् वित्तीय नीतियो मे ऐसे उपयोगी उपायो की व्यवस्था रहनी चाहिए जिनके द्वारा आर्थिक उतार-चढ़ावों को दूर किया जा सके।

आर्थिक विचारधारा में यह परिवर्तन अभी हाल में ही हुआ है। तीन दशाब्दी पूर्व प्राय. ऐसा विश्वास था कि मन्दी का सामना करने के लिए सरकार मुद्रा एवं वित्तीय ढाँचे को विशृंखलित किए बिना व्यापक कार्रवाई नही कर सकती।

इस प्रकार की आर्थिक विचारधारा के वातावरण में वित्तीय नीति अत्यन्त सकुचित तथा सीमित होती थी। जब अमेरिका में १९३०-३९ की भीषण मन्दी आयी तो अमेरिका उस चुनौती का सामना करने के लिए तैयार नही था। फिर भी देश ने अपनी लोकतन्त्री व्यवस्था के फलस्वरूप पुरानी गलतियो से लाभ उठाया और तुरन्त ही मन्दी का सामना करने के लिए दृढ़ कदम उठाए गए और कानून बने।

सम्प्रति अमेरिकी सरकार के पास ऐसे वित्तीय उपाय हैं, आर्थिक सिद्धान्त हैं तथा प्रशासन-तन्त्र है जिनका वह उचित उपयोग कर सकती है। ये उपाय पूर्णत. त्रुटिरहित नही हैं, उन्हें निरन्तर उपयुक्त कानूनो द्वारा दृढ़ एव शक्तिशाली किया जा रहा है। लोकतंत्र का लाभ यह है कि वह खून-खच्चर या आत्म-विनाश के बिना ही समय की चुनौती का सामना कर सकता है।

अमेरिकी सरकार के पास इस समय कौन से वित्तीय उपाय हैं? कार्य की दृष्टि से उन्हें दो विभागो में बाँटा जा सकता है। कई उपाय ऐसे होते हैं जो सदैव स्वयं स्थायित्व प्रदान करनेवाले के रूप में कार्यरत रहते हैं, दूसरे वे होते हैं जिन्हें सरकार विशेष परिस्थितियों के अनुसार काम में लाती है। पहली श्रेणी में बेकारी की हालत मे सहायता, सामाजिक सुरक्षा लाभ, फार्म सहायता, संघीय सरकार द्वारा स्वीकृत ऋण

बीमा तथा उर्ध्वमान आयकर आते हैं। दूसरी श्रेणी मे कांग्रेस के व अधिकार आते है जिनके जरिए वह करो में कमी या बढोतरी कर सकती है या सार्वजनिक व्यय घटा-बढ़ा सकती है।

स्वतंत्र अर्थ-व्यवस्था में आय के तीन स्रोत हैं—व्यापारिक नियोजन, उपभोक्ता-व्यय तथा सरकारी खर्च। वैयक्तिक स्वतंत्रता पर अधिक दबाव के बिना केवल तीसरे पर ही पूर्णत. सरकारी नियंत्रण हो सकता है। आय के अन्य दोनों साधनों पर सरकार अपना प्रभाव डाल सकती है, लेकिन यह प्रभाव मुद्रा नीति के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से होना चाहिए। इसलिए वित्तीय नीति का बहुत महत्त्व है विशेषकर आज के जमाने में जब सरकारी योजनाओं का विस्तार हो रहा है।

स्वयं स्थायित्व लानेवाले उपायो के क्रियान्वयन से सरकार को ऐसे उपायो को काम में लाने के लिए विचार का समय मिल जाता है जो आय तथा रोजगार के स्तरों में विश्रृंखलता को दूर करने के लिए आवश्यक होते हैं। विशेष रूप से व्यापार मे कमी तथा बेरोजगारी में वृद्धि के समय सामाजिक सुरक्षा तथा बेकारी के दौरान में सहायता जैसे स्वय स्थायित्व लानेवाले उपाय चुपचाप कार्यरत रहकर अनेक उपभोक्ताओं को क्रय-शक्ति प्रदान करते रहते हैं। अगर फार्म उत्पादनो की कीमतें गिरती है तो किसानो को सहायता दी जाती है जिससे उनकी क्रय-शक्ति बनी रहती है, और आर्थिक उन्नति के समय जैसे-जैसे आय बढ़ती है कर भी स्वयं बढ़ जाते हैं।

स्वयं स्थायित्व लानेवाले उपाय जबकि शान्त रूप से चुपचाप अपना प्रभाव डालते हैं, सरकार अधिक कठोर कानूनी कदम उठा सकती है। अगर देश की आर्थिक स्थिति गिरती हुई दिखाई देती है तो कांग्रेस अर्थ-व्यवस्था को प्रोत्साहन देने के लिए कर कम कर सकती है तथा सार्वजनिक कार्यों के लिए खर्च स्वीकार कर सकती है। मुद्रास्फीति की स्थिति में स्वयं स्थायित्व प्रदान करनेवाले उपाय नियंत्रणकारी प्रभाव डालते हैं और सरकार कर बढ़ा देती है तथा ऐसे खर्च में कटौती कर

देती है जिनसे मुद्रास्फीति की स्थिति पैदा होती है।

कोई भी मुद्रा अथवा वित्तीय उपाय स्वय ही आर्थिक उतार-चढ़ाव नही रोक सकता, लेकिन उनके सयुक्त तथा सगठित प्रयोग द्वारा आर्थिक अव्यवस्थाओं को दूर कर सकता है। मुद्रा सबधी उपाय अधिक शीघ्रता से प्रयोग मे लाए जा सकते हैं क्योंकि उन्हे क्रियान्वित करने का काम एक ही सस्था फैडरल रिज़र्व के सुपुर्द है। स्वयं स्थायित्व प्रदान करनेवाले उपाय भी आय तथा रोजगार के बढ़ते या गिरते स्तर के अनुरूप स्वयं तेजी से काम करते हैं।

सांख्यिकी तथा अर्थशास्त्र, सरकार के लिए सहायक

उपयुक्त वित्तीय तथा मुद्रा संबंधी नीतियो का चुनाव किसी सयोग के भरोसे नही छोडा जाता। १९४६ के रोजगारी कानून के अन्तर्गत आर्थिक सलाहकारो की एक परिषद् बनायी गयी। यह परिषद् आर्थिक विकासो तथा प्रवृत्तियो के सबध में सामयिक तथा अधिकृत सूचना एकत्रित करती है। 'अधिकतम रोजगार, उत्पादन, तथा क्रय-शक्ति बनाए रखने के लिए यह संघीय सरकार के कार्यक्रमो तथा उसकी गतिविधियो का मूल्याकन करती है, यह राष्ट्रीय आर्थिक नीति तैयार करती है तथा राष्ट्रपति को सिफारिश करती है। इस नीति का उद्देश्य आर्थिक उतार-चढ़ावों को बचाना अथवा उसके प्रभावो को कम करना होता है। और अन्त मे यह परिषद् अमेरिकी कांग्रेस के नाम आर्थिक सदेश तैयार करने में राष्ट्रपति की सहायता करती है। इस वार्षिक रिपोर्ट से इस बात का स्पष्ट रूप सामने आ जाता है कि अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था की क्या स्थिति है और वह किस ओर जा रही है। शेष ससार के ऊपर अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का जबरदस्त प्रभाव होने के कारण हमारे समय का यह संभवतः सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लेख होता है।

विश्वस्त सूचनाओं की परिगणना द्वारा अमेरिकी सरकार को राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का एक संपूर्ण विस्तृत चित्र प्राप्त हो जाता है।

१९४६ के रोजगारी कानून मे व्यवस्थापक सभा के लिए भविष्य-वाणियों तथा प्रगति के मूल्याकन की भी व्यवस्था है। प्रेजीडेण्ट की आर्थिक रिपोर्ट पर इस कानून के अन्तर्गत एक संयुक्त समिति की स्थापना की गयी। इस समिति में सात सदस्य सेनेट के तथा सात सदस्य प्रतिनिधि सभा के थे। यह समिति प्रेजीडेण्ट की आर्थिक रिपोर्ट से सम्बधित मामलो पर निरन्तर विचार करती है तथा सेनेट और प्रतिनिधि सभा के सामने अपनी जाँच के परिणाम और सिफारिशें पेश करती है।

× × ×

अमेरिकी सरकार को सम्प्रति ऐसे अनेक अधिकार प्राप्त है जिनके द्वारा वह आर्थिक उतार-चढ़ावों पर नियंत्रण कर सकती है और आय तथा रोजगार के ऊँचे स्तर कायम रख सकती है।

एक साधारण व्यक्ति को ये सब कानून तथा उपाय अत्यन्त जटिल दिखाई देगे—और वे है भी। लेकिन उनकी प्रमुख विशेषता यह है कि वे आर्थिक स्थायित्व की प्राप्ति के लिए अत्यन्त निष्ठापूर्ण तथा सफल प्रयास करते है और ऐसा करने में वैयक्तिक कार्य-स्वतंत्रता का हनन नही करते।

ये साधन तथा उपाय एकाएक ही नही खोज निकाले गए, अपितु वर्षों के प्रयासो तथा भूलों से प्राप्त अनुभव के परिणाम ही हैं। यह सलाह देना अबुद्धिमत्तापूर्ण होगा कि 'दूसरे देश उनकी नकल करें।' एक देश की स्थिति दूसरे देश से बहुत भिन्न होती है। फिर भी, ये उपाय विचारणीय है। वे इस बात के ऐतिहासिक प्रमाण है कि एक लोकतत्री व्यवस्था में अधिकांश सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का हल वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा का हनन किए बिना मिल सकता है।

परिशिष्ट

इस क्रांतिकारी परिवर्तन के युग में भी सामान्य व्यक्ति की बुनियादी अभिलाषाएँ प्राय. हर देश में एक जैसी है। ससार के लाखो-करोडों व्यक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता एव प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय स्वतंत्रता तथा भौतिक सम्पन्नता चाहते है। इस प्रकार लक्ष्य तो समान है लेकिन उनकी प्राप्ति के मार्ग अलग-अलग होने के कारण भ्रान्ति फैली हुई है। व्यक्ति प्रायः ऐसे तरीकों का समर्थन या उपयोग करते है जो वास्तव में उनके लक्ष्यों व उनकी आशाओं को विफल कर देते है। इस भ्रान्ति के कारण संघर्ष व शत्रुता पैदा होने से बुनियादी उद्देश्यों की प्राप्ति मे और बाधा उत्पन्न हो गयी है। परिणामतः घृणा, निराशा तथा किंकर्तव्यविमूढता ही हमारे हाथ लगी है। अगर झूठी सूचनाओ और पूर्वनिर्धारित ढंग से तथ्यों की तोड़-मरोड़ के इस गहन अन्धकार में प्रकाश डाला जाय तो दो सिद्धान्त मानवता का समर्थन और अनुरक्ति प्राप्त करने के लिए एक दूसरे से स्पर्द्धा करते हुए दिखाई पड़ेंगे। इनमें एक यह है कि व्यक्ति पर सर्वशक्तिमान् राज्य का पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए। दूसरे में इस बात पर बल दिया गया है कि लोकतंत्री आधार पर स्वीकृत एक कानूनी व्यवस्था में मनुष्य अपना जीवन स्वयं चलाने तथा सामान्य कल्याण व समृद्धि के कार्यो में अपना योग देने में समर्थ है।

सामने आनेवाली समस्याओं को भली प्रकार समझने के लिए किए जानेवाले अनुसंधान कार्यो में थोड़ा योग देकर मैंने एक ऐसी अर्थ-व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तों एवं उसकी रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है, जो व्यक्ति को उसकी भौतिक संपन्नता के आश्वासन के साथ प्रतिष्ठा तथा स्वतंत्रता का समर्थन करती है। यह अर्थ-व्यवस्था शोषण का करारा जवाब है। अगर इससे 'अनेक' को लाभ न पहुँचता तो यह

व्यवस्था कायम ही नही रह सकती थी। व्यापक उत्पादन व्यापक खपत के बिना नही चल सकता, और यह व्यापक क्रय-शक्ति पर आधारित है। यह एक ऐसा चक्र है जिसमें लोग स्वतत्रता के साथ न केवल उत्पादक के रूप में भाग लेते हैं अपितु अपनी मेहनत का फल भी भोगते हैं।

मनुष्य की दो बडी अभिलाषाओ—स्वतत्रता तथा भौतिक संपन्नता—को न केवल सिद्धान्त मे बल्कि व्यवहार मे पूरा करने के कारण अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था पुराने पूंजीवाद तथा सोवियत एकाधिकारवादी उद्योगवाद पर महान् प्रगति है।

फिर भी एक सवाल उठ सकता है, कि विशाल एशिया की करोड़ों लोगो या निकट पूर्व की राजधानी में सडको पर पश्चिम-विरोधी नारे लगानेवाले उत्तेजित युवको अथवा बीसवी सदी की उलझनो के प्रति यकायक जागरूक होने से भौचक्के रहनेवाले लाखो अफ्रीकियो के लिए इस सबका क्या व्यावहारिक अर्थ हो सकता है। इसका उत्तर यह है कि आज का समार अत्यन्त जटिल है और दिन प्रति दिन जटिलतर होता जा रहा है। मनुष्य पहले जमाने की कवि-कल्पित सरलता की ओर अब नही लौट सकता। इसके विपरीत सभी देशो में तेजी से औद्योगिकीकरण हो रहा है। लोगों के सामने जो समस्या है वह ग्रामीण सरलता अथवा आधुनिक जटिलता में से एक को चुनने की नहीं है। औद्योगिकीकरण तथा जटिलता निश्चित हैं। चुनाव लोकतंत्र अथवा एकतत्र में से करना है।

लोकतंत्री व्यवस्था के विरोधी यह दलील देंगे कि अल्पविकसि.. क्षेत्रो के अधीर राष्ट्रों के लिए इस व्यवस्था में बहुत समय लगेगा। लेकिन यह सौभाग्य की बात है कि बीसवी सदी का विज्ञान अल्पविकसित राष्ट्रों के लिए लोकतंत्री मार्ग अपनाने के काम को कम कठिन कर सकता है। नये उभरते राष्ट्र विज्ञान और लोकतत्री आर्थिक सिद्धान्तो के सयोग से अपनी जनता की दबी हुई अधीरता के लिए मार्ग खोज सकते हैं। इन सिद्धान्तों से राष्ट्र अज्ञान, गरीबी तथा गतिहीनता के कुचक्र को तोड़ उज्ज्वल भविष्य का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।

व्यावहारिक दृष्टि से बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि उन्नत लोकतत्री राष्ट्र अल्पविकसित राष्ट्रों के साथ किस प्रकार सहयोग करते है । औद्योगिकीकरण की ओर बढने के लिए संघर्षरत राष्ट्रो के प्रति औद्योगिक राष्ट्रों का उत्तरदायित्व वर्णनातीत और उनका केवल यह उत्तरदायित्व ही नही कि वे अल्पविकसित राष्ट्रो की सहायता करें अपितु यह तो उनके स्वार्थ का भी तकाजा है। उद्जन बमों तथा प्रक्षेपणास्त्रों का युद्ध शायद कभी न हो, लेकिन लोकतंत्र तथा एकतंत्र के बीच तीव्र संघर्ष निरन्तर चल रहा है। यहाँ तक कि यह लड़ाई अर्थ-व्यवस्थाओ के रूप में भी चल रही है। यह संघर्ष शायद ही कभी चमत्कारपूर्ण हो, फिर भी इसका परिणाम भविष्य के लिए संसार का निश्चय करेगा।

अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का एक बडा लाभ यह है कि यह अत्यन्त लचीली है। यह विशिष्ट आवश्यकताओ की पूर्ति के अनुरूप अपने को ढाल लेती है। राष्ट्र की बदलती हुई आवश्यकताओं के अनुसार यह सिकुड सकती है या विस्तृत हो सकती है। १८६१ में अब्राहम लिकन ने विनोद में लिखा था :

> "सरकार का यथार्थ में कार्य यह है कि वह एक जन-समुदाय के लिए उन सब कार्यो को करे, जो उन्हे करने चाहिएँ लेकिन जिन्हे वे कर नही सकते, या अपने लिए पृथक रूप से अथवा वैयक्तिक रूप से उतनी अच्छी तरह नही कर सकते।"

सरकार के इस सिद्धान्त को अधिकांश अमेरिकी सिद्धान्त रूप से और व्यवहार में समझ गए है। इसके अन्तर्गत विशाल निजी उद्योग, जैसे जनरल मोटर्स और उतने ही बडे सरकारी उद्योग जैसे टैनेसी घाटी अधिकरण, या ओक रिज, टैनेसी तथा हैनफोर्ड, वाशिंगटन में स्थित अणु-कारखाने आ जाते हैं। औद्योगिकीकरण के क्षेत्र मे पदार्पण करनेवाले राष्ट्र इस सिद्धान्त को अपने देश की परिस्थिति और समस्याओ के अनुसार प्रयोग मे ला सकते है। विभिन्न देशो में सरकारी उत्तरदायित्व

में पर्याप्त अन्तर हो सकता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जनता एकतत्र शासन की तकलीफो तथा अप्रतिष्ठा से बच जाती है।

इन सिद्धान्तो को स्वीकार कर लेने का यह अर्थ कदापि नही कि ससार अमेरिकी रग में रग जाएगा।

आज के एकतत्री सिद्धान्त ससार की आर्थिक एव सामाजिक बुराइयो को एक विशिष्ट मण्डल के हाथ मे पूर्ण सत्ता सौपकर दूर करने का वचन देते हैं। अनुभव से पता चला है कि ऐसी व्यवस्था मे मानवीय स्वतत्रता तथा अनेक मानवीय जीवनों का बलिदान हो जाता है। यहां तक कि उस विशिष्ट मण्डल के सदस्य भी स्वय सुरक्षित नही होते। इसके अतिरिक्त एकतत्र शासन द्वारा बडे पैमाने पर जो कुर्बानियाँ कराई जाती हैं, आवश्यक नही कि उनके अनुरूप ही बड़ी मात्रा में जनता को भौतिक लाभ प्राप्त हो। दूसरी ओर अमेरिकी व्यवस्था के अनुभव से पता चला है कि एक स्वतंत्र समाज मे आर्थिक एव सामाजिक असमानताओ को दूर किया जा सकता है तथा वास्तविक प्रगति की जा सकती है।

लोकतत्री औद्योगिकीकरण की अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था एक आजमाया हुआ तरीका है, जो व्यावहारिक क्षेत्र मे प्रमाणित हो चुका है तथा अधिकाधिक जनता के लिए उच्च जीवन-स्तर प्रदान करनेवाला है।

इस पुस्तक मे पाठक के सामने अमेरिकी अर्थ व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तों तथा लक्षणों की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। पाठक अब अपना निर्णय स्वयं करें।